चैत्र मास शुक्ल पक्ष, 22 वर्ष, अंक 69, पृष्ठ 8, मूल्य 3.00

अखंड भारत संदेश

www.akhandbharatsandesh.net

प्रयागराज से प्रकाशित

नगर संस्करण प्रयागराज | गुरूवार 06 अप्रैल 2023 | विश्व निर्माण एवं मानव विकास को द्रुतगति प्रदान करने हेतु क्रियायोग आश्रम एवं अनुसंधान आश्रम की अनुपम भेंट

सुप्रीम कोर्ट से विपक्ष को बड़ा झटका

केंद्रीय एजेंसियों के दुरुपयोग की याचिका पर सुनवाई से इनकार

नई दिल्ली: सुप्रीम कोर्ट ने केंद्रीय जांच एजेंसियों ईडी और सीबीआई द्वारा विपक्ष के नेताओं की गिरफ़्तारी के मामले पर दायर याचिका पर सुनवाई करने से इनकार कर दिया है। चीफ जस्टिस डीवाई चंद्रचूड़ की अध्यक्षता वाली बेंच ने कहा कि वो ईडी और सीबीआई की गिरफ्तारियों और जमानत को लेकर सामान्य दिशा-निर्देश जारी नहीं कर सकता है। कोर्ट ने कहा कि वो किसी भी मामले के तथ्य के आधार पर दिशा-निर्देश जारी कर सकता है। बिना तथ्य को जाने कोर्ट दिशा-निर्देश कैसे जारी कर सकता है। 14 राजनीतिक दलों ने विपक्षी नेताओं की गिरफ्तारियों के मामले में सुप्रीम कोर्ट में याचिका दायर की थी। याचिका में केंद्रीय जांच एजेंसियों के दुरुपयोग का आरोप लगाया गया था। याचिका दायर करने वाली पार्टियों में कांग्रेस, आम आदमी पार्टी, तृणमूल कांग्रेस, डीएमके, उद्धव ठाकरे गुट वाली शिवसेना, बीआरएस, जेडीयू, झारखंड मुक्ति मोर्चा, सीपीआई, सीपीएम, नेशनल कांफ्रेंस और समाजवादी पार्टी शामिल हैं। याचिका में ईडी और सीबीआई द्वारा गिरफ्तारियों और जमानत को लेकर दिशानिर्देश जारी करने की मांग की गई थी। याचिका में कहा गया था कि कहा कि लगातार विपक्षी नेताओं को निशाना बनाया जा रहा है।

विपक्ष का चेहरा हो गया बेनकाब : अनुराग ठाकुर

नई दिल्ली: केंद्रीय जांच एजेंसियों के दुरुपयोग के खिलाफ सुप्रीम कोर्ट में दायर याचिका पर बुधवार को कोर्ट द्वारा सुनवाई से इनकार कर दिए जाने के बाद भाजपा ने विपक्ष पर निशाना साधा है। केंद्रीय सूचना प्रसारण मंत्री अनुराग ठाकुर ने मीडिया से बात करते हुए कहा कि विपक्ष का पदार्फाश हो गया है। कांग्रेस भ्रष्टाचार का नेतृत्व कर रही है। जांच एजेंसियों को भ्रष्टाचारियों के खिलाफ कार्रवाई करने का अधिकार है। गौरतलब है कि कांग्रेस के नेतृत्व में 14 विपक्षी दलों ने केंद्र सरकार पर जांच एजेंसियों के मनमाने इस्तेमाल का आरोप लगाया था। इस पर सुप्रीम कोर्ट में याचिका दायर की थी, जिस पर कोर्ट ने सुनवाई से इनकार कर दिया। नतीजतन, विपक्षी दलों ने याचिका वापस ले ली।

किताबों में बदलाव पर भड़की कांग्रेस

नई दिल्ली: एनसीईआरटी की 12वीं कक्षा की नई पाठ्यपुस्तकों में हुई ऐतिहासिक घटनाओं एवं प्रसंगों की काट-छांट पर कांग्रेस भड़की हुई है। कांग्रेस नेता ने इसे लेकर भाजपा के नेतृत्व वाली केंद्र सरकार पर प्रतिशोध के भावना से काम करने और इतिहास बदलने की कोशिश का आरोप लगा रही है। जबकि, भाजपा का कहना है कि वह सिर्फ ऐतिहासिक गलतियों को सुधार रही है। वहीं, एनसीईआरटी का दावा है कि इस साल पाठ्यक्रम में कोई कटौती नहीं हुई है और पिछले साल जून में पाठ्यक्रम को युक्तिसंगत बनाया गया था।

कांग्रेस नेताओं ने साधा था केंद्र सरकार पर निशाना: कांग्रेस ने बुधवार को एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकों से गायब कुछ पाठों को लेकर सरकार पर निशाना साधा था, जिसमें महात्मा गांधी की हत्या, गांधी की हिंदू-मुस्लिम एकता की खोज, कुछ समय के लिए आरएसएस पर प्रतिबंध आदि नए शैक्षणिक सत्र के लिए 12वीं कक्षा की राजनीति विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों से गायब हैं। कांग्रेस नेता कपिल सिब्बल ने भी गुजरात दंगों से जुड़ा पाठ हटाने पर सरकार की आलोचना की।

पीएम से बोले पद्मश्री कादरी- मुझे गलत साबित कर दिया

भाजपा की सरकार बनी तो लगा अब मुझे इस सम्मान लायक न समझा जाए

नई दिल्ली: राष्ट्रपति भवन में बुधवार को 53 हस्तियों को राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू ने पद्म पुरस्कारों से नवाजा गया। इनमें उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री स्व. मुलायम सिंह यादव, मेडिकल प्रोफेशनल दिलीप महालनाबिस, ऑथर सुधा मूर्ती, रिसर्चर दीपक धर, नोवेलिस्ट एस एल भैरप्पा, वैदिक विद्वान त्रिदंडी चिन्ना जीयर स्वामी, ऑस्कर विनर नाटू-नाटू गाने के म्यूजिक डायरेक्टर एमएम कीरावानी, फिल्म एक्ट्रेस रवीना टंडन आदि शामिल हैं। पद्म पुरस्कार समारोह में पहुंचे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी से शाह रशीद अहमद कादरी ने कहा- कांग्रेस शासन के दौरान, मुझे पद्म श्री नहीं मिला। मैंने सोचा था कि भाजपा सरकार मुझे यह सम्मान नहीं देगी, लेकिन आपने मुझे गलत साबित कर दिया। कादरी बिदरी कला के शिल्पकार। वे पचास साल से भी ज्यादा समय से इस कला में काम कर रहे हैं। उन्होंने कई डिजाइन और पैटर्न इजाद करके बिदरी शिल्प को विकसित किया। समारोह में उप राष्ट्रपति जगदीप धनखड़, लोकसभा स्पीकर ओम बिरला, केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह, भाजपा अध्यक्ष जेपी नड्डा समेत अन्य केंद्रीय मंत्री मौजूद रहे। राष्ट्रपति ने गणतंत्र दिवस की पूर्व संध्या पर तीन संयुक्त पुरस्कारों सहित 106 पद्म पुरस्कार प्रदान करने की मंजूरी दी थी। 53 हस्तियों को 22 मार्च को आयोजित समारोह में सम्मानित किया गया था। बुधवार को 53 पुरस्कार विजेताओं को सम्मान दिया गया। इनमें तीन पद्म विभूषण, पांच पद्म भूषण और 45 पद्म श्री शामिल हैं।

लिंचिंग, हेट स्पीच के मामलों में कार्रवाई का भरोसा दिया; धर्मगुरु बोले- ये शाह बिल्कुल अलग थे

मुस्लिम धर्मगुरुओं से मिले अमित शाह

नई दिल्ली: मुस्लिम धर्मगुरुओं और बुद्धिजीवियों के एक 16 सदस्यीय प्रतिनिधिमंडल ने जमीअत उलमा-ए-हिंद के अध्यक्ष मौलाना महमूद असद मदनी के नेतृत्व में मंगलवार रात गृह मंत्री अमित शाह से उनके आवास पर मुलाकात की। मुलाकात के दौरान प्रतिनिधिमंडल ने मुस्लिम समुदाय से जुड़ी चिंताओं को अमित शाह के समक्ष रखा। गृहमंत्री ने प्रतिनिधिमंडल को ध्यान से सुना और उन्हें सभी जरूरी आश्वासन दिये। मुलाकात के दौरान प्रतिनिधिमंडल ने सांप्रदायिक दंगों, नफरती अभियान, इस्लामोफोबिया, मॉब लिंचिंग, समान नागरिक संहिता, मदरसों की स्वायत्तता, कर्नाटक में मुस्लिम आरक्षण, कश्मीर की वर्तमान स्थिति, असम में जबरन बेदखली और वक्फ संपत्तियों की सुरक्षा जैसे मुद्दों को लिखित रूप में प्रस्तुत किया। एक घंटे से अधिक चली इस बैठक में मौलाना कलीम सिद्दीकी और उमर गौतम की जमानत का मुद्दा भी उठाया गया। जमीअत की तरफ से आए बयान के अनुसार बातचीत के आरंभ में जमीअत उलमा-ए-हिंद के अध्यक्ष मौलाना महमूद मदनी ने कहा कि देश के दूसरे सबसे बड़े बहुसंख्यक वर्ग को निराशा के अंधेरे में धकेलने का प्रयास किया जा रहा है और नफरत एवं संप्रदायिकता की खुलेआम अभिव्यक्ति द्वारा देश के वातावरण को दूषित करने का हर संभव प्रयास किया जा रहा है। इसके कारण देश की आर्थिक और व्यावसायिक हानि होने के अलावा देश की अच्छी छवि भी धूमिल हो रही है। इन परिस्थितियों में हम आपसे यह आशा करते हैं कि इसके समाधान के लिए आप तत्काल कदम उठाएंगे। गृह मंत्री ने प्रतिनिधिमंडल द्वारा प्रस्तुत की गई मांगों को ध्यान से पढ़ा और देश की सांप्रदायिक स्थिति पर कहा कि इस बार रामनवमी त्योहार के अवसर पर जो धार्मिक तनाव और हिंसा हुई है, उससे हम भी चिंतित हैं। जिन राज्यों में हमारी सरकारें नहीं हैं, वहां हमने राज्यपाल या मुख्यमंत्री के जरिए इसे नियंत्रित करने की कोशिश की गई है और जहां हमारी सरकारें हैं, वहां जो भी घटनाएं हुई हैं, जांच के बाद दोषियों विरुद्ध कठोर कार्रवाई की जाएगी।

गृह मंत्री ने मॉब लिंचिंग की घटनाओं के संबंध में कहा कि मॉब लिंचिंग की घटनाएं देश के किसी भी हिस्से में हुई हों, हमें यह देखने की जरूरत है।

सोनिया के घर शिफ्ट होंगे राहुल, सामान भेजा जा रहा

राहुल ने कहा था- इस सरकारी बंगले से अच्छी यादें जुड़ीं

नई दिल्ली: राहुल गांधी सरकारी बंगला छोड़ने के बाद सोनिया गांधी के घर (10 जनपथ) शिफ्ट हो रहे हैं। उनका सामान शिफ्ट किया जा रहा है। वे जल्द ही यहां रहने लगेंगे। 23 मार्च को सूरत कोर्ट ने मानहानि केस में उन्हें 2 साल कैद की सजा सुनाई थी। हालांकि कुछ ही देर में उन्हें जमानत भी दे दी थी। इसके अगले दिन राहुल की लोकसभा सदस्यता रद्द कर दी गई। जिसके बाद 27 मार्च को उन्हें बंगला खाली करने का नोटिस दिया गया। नोटिस मिलने के बाद राहुल ने कहा था कि सरकारी बंगले से उनकी कई अच्छी यादें जुड़ी हुई हैं। कांग्रेस अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खड़गे ने तब उन्हें अपने या सोनिया के बंगले में शिफ्ट होने का सुझाव दिया था।

अमेठी से सांसद बनने के बाद 2005 में सरकारी बंगला दिया गया था: राहुल को 27 मार्च को लोकसभा हाउसिंग कमेटी ने 12 तुगलक रोड का सरकारी आवास खाली करने का नोटिस भेजा था। बंगला खाली करने के लिए 24 अप्रैल तक का समय दिया गया था। नोटिस मिलने के अगले दिन राहुल ने लोकसभा सचिवालय के डिप्टी सेक्रेटरी डॉ. मोहित रंजन को लिखित जवाब भेजा। राहुल ने अपने जवाब में लिखा- मैं 4 बार लोकसभा सांसद चुना गया। यह लोगों का जनादेश है, जिसके लिए मैं लोगों का शुक्रगुजार हूं। मेरी इस घर से कई अच्छी यादें जुड़ी हुई हैं। मैं नोटिस में दिए गए आदेश का पालन करूंगा। 2004 में अमेठी से पहली बार सांसद चुने जाने पर राहुल को यह बंगला 2005 में अलॉट किया गया था।

आंदोलन तेज करने की तैयारी में विशाल मजदूर और किसान रैली

नई दिल्ली: रामलीला मैदान में देश भर से कई संगठनों के बैनर तले किसान पहुंचे और केंद्र सरकार के खिलाफ हुंकार भरी। सभी ने कहा अगर केंद्र सरकार इनकी मांगों को पूरा नहीं करती है तो साल 2024 में देश से मोदी सरकार को हटाने के लिए एक बड़ा आंदोलन करेंगे। इस आंदोलन का मकसद होगा बस एक प्रधानमंत्री की कुर्सी से मोदी को हटाया जाए। नई दिल्ली रेलवे स्टेशन और दिल्ली गेट मेट्रो स्टेशन से कुछ दूरी पर स्थित रामलीला मैदान में ऑल इंडिया किसान सभा (एआईकेएस), सेंटर ऑफ इंडियन ट्रेड यूनियंस (सीटू), ऑल इंडिया एग्रीकल्चरल वर्कर्स यूनियन (एआईजीडब्ल्यूयू) के तत्वाधान में इस मैदान में किसान संघर्ष रैली का आयोजन किया गया।

किसानों की मुख्य मांगें: फसल की लागत का डेढ़ गुना दाम हो, 26000 रुपये महीना न्यूनतम वेतन लागू किया जाए, पुरानी पेंशन योजना को लागू की जाए, सार्वजनिक क्षेत्रों में निजीकरण की प्रक्रिया बंद की जाए, काम का ठेकाकरण बंद किया जाए, कर्मचारियों को नियमित किया जाए और मनरेगा में 200 दिन का रोजगार और 600 रुपये दिहाड़ी दी जाए।

हनुमान जयंती पर केंद्र की राज्यों को एडवाइजरी

नई दिल्ली: देश के कई राज्यों में रामनवमी पर हिंसा के बाद गृह मंत्रालय ने बुधवार को सभी राज्यों के लिए एडवाइजरी जारी की। मंत्रालय ने कहा कि हनुमान जयंती पर शांति बनी रहे, इसके लिए कानून-व्यवस्था बनाए रखें। हर ऐसी चीज पर नजर रखें, जिससे साम्प्रदायिक सौहार्द बिगड़ने की आशंका हो। हनुमान जयंती 6 अप्रैल को है। उधर, कलकत्ता हाईकोर्ट ने भी मंगलवार को बंगाल सरकार को इसी सिलसिले में निर्देश दिए। हाईकोर्ट ने कहा- अगर आपके पास पुलिस कम है तो आप केंद्र से फोर्स मांगिए। और केंद्र सरकार भी तुरंत आपकी अपील पर कदम उठाए। हमें लोगों की सुरक्षा करनी है।

कोर्ट ने कहा कि मामले की संवेदनशीलता को देखते हुए कोई भी राजनीतिक शख्सियत या कोई नेता या आम आदमी गुरुवार को मनाए जाने वाले त्योहार को लेकर जनता या मीडिया के सामने कोई बयान नहीं देगा। कोर्ट ने राम नवमी पर हुई हिंसा का हवाला देते हुए सरकार से सवाल किया। कोर्ट ने कहा- आप कह रहे हैं कि कुछ लोगों को गिरफ्तार किया है। हमारे पास कुछ जजों के खत आए हैं। उन्होंने कहा कि उनके घरों के पास दंगा हो रहा है। तब क्या होगा, जब ऐसा ही माहौल कोर्ट परिसर के भीतर भी हो जाए। कुछ तो करना होगा। आप शोभायात्रा के रास्तों पर बैरिकेड्स लगाइए। पुलिस शांति मार्च निकाल सकती है ताकि लोगों को यह लगे कि वह सुरक्षित हैं।

पश्चिम बंगाल सरकार ने कलकत्ता हाईकोर्ट में शिबपुर और रिशरा में हुई हिंसा पर एक रिपोर्ट पेश की। कोर्ट ने राज्य सरकार से पूछा कि हनुमान जयंती के मद्देनजर राज्य में शांति बनाए रखने के लिए वह क्या कदम उठा रही है।

राष्ट्रपति मुर्मू सुखोई 30 एमकेआई लड़ाकू विमान में भरेंगी उड़ान

नई दिल्ली: राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू 06 से 08 अप्रैल तक असम का दौरा करेंगी। इस दौरान वे सुखोई 30 एमकेआई लड़ाकू विमान से उड़ान भी भरेंगी।

राष्ट्रपति मुर्मू सचिवालय के अनुसार 07 अप्रैल को राष्ट्रपति काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान में गज उत्सव-2023 का उद्घाटन करेंगी। बाद में गुवाहाटी में वह माउंट कंचनजंगा अभियान-2023 को झंडी दिखाकर रवाना करेंगी। उसी दिन वह गुवाहाटी हाई कोर्ट के 75 वर्ष पूरे होने के अवसर पर आयोजित समारोह में भी भाग लेंगी।

अधिक भीड़भाड़ वाले स्थानों पर सावधानी जरूरी, चेतावनी, भीड़भाड़ वाले स्थान कोविड के सुपर स्प्रेडर बन सकते हैं

कोविड-19 को लेकर बीएचयू ने किया अध्ययन

वाराणसी: एक बार फिर कोविड-19 के बढ़ रहे संक्रमण को देख भीड़-भाड़ वाले स्थानों पर जाने से बचने का सुझाव डब्लूएचओ ने दिया है। चेतावनी दी है कि भीड़भाड़ वाले स्थान कोविड के सुपर स्प्रेडर बन सकते हैं। पहले भी उत्तर भारत में ये स्थान संक्रमण फैला चुके है। अधिक भीड़भाड़ वाले स्थानों पर आयोजित कार्यक्रमों से संक्रमण सामान्य से 5 से 10 गुना तेजी की रफ्तार से बढ़ा है। भारत में अल्फा वेरिएंट (बी.1.1.7) के भौगोलिक और सामयिक विस्तार का अध्ययन करते हुए दुनिया भर के सात संस्थानों के पंद्रह वैज्ञानिकों की एक टीम ने पंजाब में अल्फा

वेरिएंट जनित कोविड-19 मामलों की असामान्य वृद्धि पाई, जो भारत के अन्य राज्यों में अल्फा वेरिएंट के प्रसार से बिलकुल अलग थी। इस अध्ययन का नेतृत्व करने वाले काशी हिन्दू विश्वविद्यालय (बीएचयू) के जंतु विज्ञान विभाग के प्रो. ज्ञानेश्वर चौबे ने बताया कि पंजाब में कोरोना का अचानक आया उछाल प्राकृतिक नहीं था। तकनीकी रूप से, इसका फैलाव बहुत ही तेज था और नाम मात्र के फाउंडर्स क्लस्टर से जुड़ा था। पंजाब से प्राप्त जीनोमिक सीक्वेंस स्वतंत्र वंशावली के बजाय कुछ ही क्लस्टर्स से जुड़े थे। इस तरह के फाउंडर क्लस्टर आमतौर पर सुपर-स्प्रेडर इवेंट्स, जैसे, इनडोर मीटिंग्स या किसी बड़ी सभा के कारण देखने को मिलते है। ऐसा प्रतीत होता है कि संभवतः अधिक भीड़भाड़ वाले स्थानों या कार्यक्रमों से संक्रमण सामान्य से 5-10 गुना तेजी से बढ़ा।

अर्धसैनिक बलों में पूर्व अग्निवीरों को मिलेगा आरक्षण

नई दिल्ली: केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल (सीआईएसएफ) में 10 फीसदी आरक्षण का प्रावधान किया गया है। बुधवार को राज्य सभा में पूछे गए एक प्रश्न के लिखित जवाब में गृह राज्य मंत्री नित्यानंद राय ने बताया कि गृह मंत्रालय ने 6 मार्च को सीआईएसएफ विंग (अधीनस्थ रैंक) समूह ख और ग पद भर्ती नियम 2010 में संशोधन को अधिसूचित किया है। जिसके तहत सीआईएसएफ में कांस्टेबल (जनरल ड्यूटी) की भर्ती में पूर्व अग्निवीरों के लिए रिक्तियों के 10 फीसदी आरक्षण का प्रावधान किया गया है। सरकार ने केंन्द्रीय सशस्त्र

पुलिस बलों और असम राइफल्स (सीएपीएफ एंव एआर) में क्रमशः कांस्टेबल (जनरल ड्यूटी) / राइफलमैन के पद पर भर्ती के लिए पूर्व-अग्निवीर की नई श्रेणी के सृजन हेतु अनुमोदन प्रदान किया और उनके लिए निम्नलिखित प्रावधान किए गए है।

खबर संक्षेप

भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने व समग्र विकास हेतु यमुनापार को जिला बनाना जरूरी : गजेन्द्र

कोरांव। यमुनापार को अलग जिला बनाने की मांग को लेकर चलाए जा रहे अभियान के तहत यमुनापार विकास समिति के तत्वावधान में विभिन्न सामाजिक संगठनों एवं समाजसेवियों की एक बैठक बड़ोखर ग्राम के मौर्या कंप्यूटर सेंटर में परशुराम केशरी की अध्यक्षता मे सम्पन्न हुई। संचालन यमुनापार पर्यटन विकास समिति के अध्यक्ष सुरेश कुशवाहा ने किया। मुख्य अतिथि के रुप में उपस्थित यमुनापार विकास समिति के अध्यक्ष वरिष्ठ पत्रकार गजेंद्र प्रताप सिंह ने लोगों से जिला मुख्यालय नजदीक हो जाने से संभावित लाभों पर चर्चा करते हुए कहा कि प्रशासनिक सुलभता व निगहबानी से भ्रष्टाचार में कमी और लोगों में शासन के प्रति विश्वास जागृत होगा। इस मौके पर लोक टीवी के संपादक प्रशांत त्रिपाठी ने कहा कि जिला मुख्यालय दूर रहने से बाहरी निवेश प्रभावित होता है और लोगों को बढ़ने के अवसर कम मिल पाते हैं ऐसे में क्षेत्र के विकास के साथ-साथ देश के विकास पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है। कार्यक्रम में उपस्थित सभी लोगों ने यमुनापार को जिला बनाने की माँग करते हुए विकास के लिए जरूरी बताया। मौर्या कंप्यूटर संस्थान के प्रबंधक अशोक मौर्या, शिक्षक आरिफ खान, सुमन शुक्ला, विश्वनाथ प्रताप सिंह, प्रशान्त केशरी, हरि ओम दुबे, संजय कुमार कुशवाहा, साक्षी द्विवेदी, आदर्श शुक्ला, प्रियांशू कनौजिया, अंतिना सिंह, प्रियांशू गुप्ता समेत क्षेत्रीय निवासी उपस्थित रहे।

डीएम के आदेश के बावजूद राजनीतिक दबाव में अंत्येष्टि स्थल निर्माण कार्य रुकवाया

● पूजा पाठ कर उद्घाटन के बाद अचानक राजस्व कर्मियों ने राजनैतिक दबाव में निर्माण कार्य रुकवा दिया

अखंड भारत संदेश

करछना। विकासखंड के अंतर्गत ग्राम पंचायत महोरी रीवा में 25 लाख रुपए स्वीकृति शासन द्वारा अंत्येष्टि स्थल बनाए जाने के लिए धन स्वीकृत किया गया था जिस पर गाटा संख्या 82 पर अंत्येष्टि स्थल की स्वीकृति डीएम प्रयागराज ने बनाने के लिए निर्देश दिया था बुधवार को एडीओ पंचायत विवेक कुमार मिश्रा सचिव कमल सिंह राजस्व कर्मियों ने नायब तहसीलदार अमित पाठक, लेखपाल नवीन श्रीवास्तव एवं करछना थाने की मैं फोर्स के साथ कार्यस्थल पर ब्लाक कर्मचारियों द्वारा पूजा पाठ कर अंत्येष्टि स्थल का उद्घाटन किया तत्पश्चात जेसीबी से मिट्टी का काम समतल कराने का शुरू हुआ ही था कि उसी दरमियान गांव के 50 से अधिक लोग मौके पर जाकर प्रशासन से भिड़ गए जिसमें पूर्व ब्लाक प्रमुख रामतौल पटेल उर्फ हरेंद्र प्रताप सिंह के नेतृत्व में प्रशासन से जद्दोजहद नोकझोंक लाठी-डंडे असलहे मंगाने की बात फोन से गांव वालों से लें आने के लिए ललकारा है एवं बवाल करने की मंशा जाहिर की गई जिस पर राजनीतिक उठापटक शुरू हो गई आधे घंटे तक जेसीबी से कार्य पुलिस की मौजूदगी में शुरू हुआ था कि उसी समय नायब तहसीलदार अमित पाठक ने बताया कि एसडीएम ने कार्य रोक दिया जाए के लिए फोन किया है। शनिवार को दोनों पक्ष थाना दिवस पर मामले का हल किया जाएगा।

बता दें कि उक्त नायब तहसीलदार अमित पाठक को गुमराह किया कि एसडीएम ने कार्य फोन करके रुकवा दिया है लेकिन एसडीएम ने कोई आदेश फोन से नहीं दिया था इसके बावजूद नायब तहसीलदार ने कार्य रुकवा दिया प्रधान राजकुमार पटेल ने बताया कि डीएम के आदेश के बावजूद राजस्व कर्मियों ने राजनैतिक दबाव में सरकारी कार्य में बाधा पहुंचाते हुए अंत्येष्टि स्थल निर्माण कार्य को रुकवाया जो शासन के निदेशों की धज्जियां उड़ाई गई।

न्यूज झरोखा

प्रा.विद्यालय चनैनी में वार्षिक उत्सव कार्यक्रम हर्षोल्लास से मनाया गया

करछना। विकास खंड के प्राथमिक विद्यालय चनैनी में विगत वर्षों की भांति बुधवार को अभिभावकों संग छात्रों एवं प्रधान की उपस्थिति में वार्षिक उत्सव कार्यक्रम हर्षोल्लास पूर्वक मनाया गया, इस अवसर पर प्रधान धीतेश तिवारी ने नौनिहालों को कापी,पेंसल, ड्राइंग बाक्स आदि उपहार स्वरूप भेंट कर नौनिहालों का उत्साहवर्धन किया, वार्षिकोत्सव समारोह में विद्यालय के छात्र छात्राओं ने सांस्कृतिक कार्यक्रमों में शामिल होकर अभिभावकों और शिक्षकों का अपनी कला से मनमुग्ध कर दिया, कार्यक्रम के समापन पर प्रधान धीतेश तिवारी द्वारा सभी का मुह मिठा करा विदा किया, इस मौके पर प्रधानाचार्य इस्मत फातिमासहायक अध्यापक पूनम सहायक अध्यापक उजमा शशि शुक्ला सहित छात्र छात्राओं संग अभिभावक गणमान्य लोग मौजूद रहे।

करछना से बुजुर्ग गायब परिजनों ने थाने में दी गुमशुदगी

करछना। थाना क्षेत्र के अंतर्गत ग्राम सभा खजुरी बराव करछना से बुजुर्ग हुआ गायब बता दें कि मानसिक स्थित ठीक ना होने की वजह से देवी प्रसाद यादव पुत्र स्वर्गीय बाबू राम यादव सुबह नहा धोकर खाना खा कर बिना बताए साइकिल लेकर घर से निकल गया। जब देर होने लगी तो परिजन ढूंढना चालू किए,कई जगह फोन करके सूचना भी दी लेकिन उनका पता ना चला।परिजन थाना करछना में तहरीर देकर गुमशुदगी की रिपोर्ट दर्ज कराई वहीं लोगों का कहना है कि 27 मार्च को सुबह से ही गायब हैं वहीं परिजनों का रो रो कर बुरा हाल है लोगों ने बताया कि कहीं भी जाते थे तो एक-दो दिन में चले आते थे लेकिन इतने दिनों के बीत जाने के बाद वापस ना आना चर्चा का विषय बना हुआ है हताश परिजन ने करछना थाने में रिपोर्ट दर्ज करा कर सकुशल घर वापसी की गुहार लगाई। थाना प्रभारी विश्वजीत सिंह ने कहा कि हम जल्द से जल्द इनका पता करके आपको सूचित करेंगे।

महापौर अभिलाषा गुप्ता ने किया जनसंवाद

सहसों। नगर निकाय चुनाव की तैयारी को लेकर मलावां बुजुर्ग वार्ड नंबर 25 में बुधवार को ईसीपुर में शिवा मेडिकल स्टोर पर पार्षद प्रत्याशी सियाराम मौर्य की अगुवाई में प्रयागराज की महापौर अभिलाषा गुप्ता का भाजपा कार्यकताओं ने भव्य स्वागत किया। इस अवसर पर महापौर अभिलाषा गुप्ता ने चुनावी चर्चा करते हुए उपस्थित लोगों से जनसंवाद किया एवं उपस्थित महिलाओं की समस्या को सुना और निदान का आश्वासन भी दिया। इस मौके पर प्रमुख रूप से आशीष केसरवानी जिला कोषाध्यक्ष भाजपा गंगापार, शिव कैलाश आचार्य, राजनाथ जी, अनिरुद्ध पांडे, शिवाकांत कुशवाहा, नीरज सिंह, विजय कुमार यादव, कमलेश भारतीया सहित ग्रामीण महिला एवं पुरुष उपस्थित रहे।

बोलेरो पलटने से दर्शनार्थी यात्री घायल

सहसों। सुल्तानपुर जनपद के धमौर निवासी रामअचल अपने परिवार के साथ बुधवार को विंध्याचल दर्शन के लिए गए हुए थे। विंध्याचल से माता रानी के दर्शन करके बोलेरो गाड़ी से वापस घर लौट रहे थे। थरवई थाना क्षेत्र के मलाकामय भैसाही गांव के सामने हड़िया- कोखराज राष्ट्रीय राजमार्ग पर बुधवार दोपहर करीब दो बजे गाड़ी अचानक अनियंत्रित होकर पलट गई। गाड़ी करीब दस फीट नीचे सर्विस रोड पर चली गई। जिससे गाड़ी चालक श्यामलाल समेत चार लोग घायल हो गए। गाड़ी पलटने की आवाज सुनकर आसपास के लोग भाग कर मौके पर पहुंचे और गाड़ी को सीधा किया। उपस्थित ग्रामीणों ने घायलों की सहायता करते हुए फोन कर 108 नंबर एंबुलेंस को बुलाया गया। तथा सभी घायलों को सीएचसी बनी अस्पताल में भर्ती कराया गया है।

दुकान से खाना खाने के लिए घर निकला युवक लापता

सिरसा। मेजा थाना क्षेत्र के पकरी सेवार गांव का एक युवक अचानक लापता हो गया जिसे लेकर परिजनों का रो रो कर बुरा हाल है। मिली जानकारी के अनुसार पकरी सेवार गांव की पूर्व प्रधान सिंगारी देवी पत्नी बेचन राम निषाद का बेटा मनदीप उर्फ मोनू (22) मंगलवार दोपहर अपनी दुकान से तकरीबन 1 बजे अचानक लापता हो गया। उसका भाई दुकान पर पहुंचा तो दुकान का शटर बंद था भाई ने जब उसके मोबाइल पर संपर्क करना चाहा तो उसका मोबाइल स्विच ऑफ रहा। अनहोनी की आशंका पर परिजनों के द्वारा नात रिश्तेदारी में खोजबीन किया गया लेकिन लापता युवक का कुछ पता नहीं चल सका। मां सिंगारी देवी ने बताया कि मंदीप पकरी सेवार के मार्केट में अपनी दुकान चलाता था। सुबह दुकान पर गया और दोपहर खाना खाने के लिए घर के लिए निकला था लेकिन घर नहीं पहुंच सका और तभी से लापता है।

शिक्षा वह मूलमंत्र है जिससे दुनिया का हर दरवाजा खोला जा सकता है : शैलेश यादव ब्लॉक प्रमुख

प्रतापपुर। सर्व शिक्षा अभियान के तत्वावधान में कंपोजिट एक बात प्राथमिक विद्यालय प्रतापपुर में बच्चों के स्कूल चलो अभियान के तहत जागरूकता रैली निकाली गई।इस मौके पर बच्चों ने अपने हाथ में स्कूल चलो अभियान के बैनर के पीछे जागरूकता का संदेश लेखन लेकर क्षेत्र में भ्रमण किया। शिक्षकों ने घर घर जाकर अभिवावकों से छोटे बड़े बच्चों को स्कूल भेजने की अपील किया।इस अवसर ब्लॉक प्रमुख प्रतापपुर शैलेश यादव ने बच्चों का उत्साहवर्धन करते हुए कहा कि आज के बच्चे कल के भविष्य हैं शिक्षा वह मूलमंत्र है जिससे दुनिया का हर दरवाजा खोला जा सकता है शिक्षित व्यक्ति समाज के हर सांचे में ढल सकता है।इस अवसर पर खंड शिक्षा अधिकारी राकेश कुमार यादव, सीएचसी अधीक्षक आनंद सिंह, प्रधानाध्यापक दिलीप कुमार यादव, दिनेश कुमार यादव, सविता श्रीवास्तव, मिराज अहमद, जितेंद्र कुमार, ओंकारनाथ, कुसुमलता भास्कर, इंद्रेश कुमार, ऊषा मौर्या, अल्का सिंह, कंचन यादव, विनोद शंकर यादव आदि शिक्षक उपस्थित रहे।

कच्ची शराब के साथ एक को दबोचा लहन ,भट्ठी को किया नष्ट

मऊआइमा। मऊआइमा थाना के सब इंस्पेक्टर जगदीश त्रिपाठी ने हमराही पुलिसकर्मियों के साथ ग्राम सकरामऊ के अमानगंज में दबिश डाल कर बीस लीटर कच्ची दारू के साथ रुपेश कुमार पुत्र अमृतलाल को गिरफ्तार कर लहन भट्ठी को नष्ट कर मुकदमा दर्ज कर विधिक कार्यवाही की है।

शार्ट सर्किट से लगी आग : डेढ़ बीघे गेहूं की कटी फसल जलकर राख

अखंड भारत संदेश

करछना। गर्मी की दस्तक होते हैं आग लगने की घटनाएं बढ़नी शुरू हो गए हैं बुधवार को करछना तहसील के कुशलगढ़ गांव में खेत के ऊपर से गए विद्युत तार में कोई शार्ट सर्किट से गेहूं के खेत में आग लग गई जब तक फायर ब्रिगेड और गांव के लोगों ने मौके पर पहुंचकर आग पर काबू पाया तब तक तकरीबन डेढ़ बीघा गेहूं की कटी फसल जलकर नष्ट हो गई।करछना तहसील के कुशगढ गांव कि किसानों की गेहूं की फसल पक गई है लोग कटाई लगाएं यहां के रहने वाले सुधाकर शुक्ला का करीब डेढ़ बीघे गेहूं की फसल कट गई थी। बोझ बांधकर खेत में ही फसल रखी थी। बुधवार दोपहर में उनके खेत के ऊपर से गए बिजली के तार में तेज हवा की वजह से शार्ट सर्किट हो गई। जिसकी चिंगारी से गेहूं के खेत में आग लग गई। जब आग लगी तो बगल के खेत में कुछ लोग अपना गेहूं काट रहे थे। उन लोगो ने शहर मचाया और गांव वालो को खबर दी। तत्काल फायर ब्रिगेड बुलाया गया। जब तक फायर ब्रिगेड मौके पर पहुंचा आग पूरे खेत में फैल चुकी थी। फायर ब्रिगेड कर्मियों ने ग्रामीणों की मदद से आग पर काबू पाया। ग्रामीणों ने बताया की संयोग ये अच्छा था कि समय रहते आग लगने की जानकारी हो गई। इसलिए जल्द से जल्द आग पर काबू पा लिया गया। अगर आग फैलती तो सैकड़ों बीघे गेहूं की कटी और खड़ी फसल खाक हो जाती। गांव वालो ने आरोप लगाया है कि बिजली के जर्जर तारों की वजह से आए दिन शार्ट सर्किट होती है और आग लगती है। विभाग के लोग इन तारों को बदल नही रहे है।

चोरों ने सेंधमारी कर लाखों के सामान पर किया हाथ साफ

मऊआइमा। मऊआइमा क्षेत्र में चोरी की घटना आम हो गई है। बीती रात चोरों ने सेंधमारी करके परचून की दुकान से लाखों का चोरी कर ले गए। भुक्तभोगी ने अज्ञात चोरों के खिलाफ मुकदमा दर्ज कर लिया है। मऊआइमा थाना क्षेत्र के ग्राम सुलतानपुर खास डाकखाना के सामने दिलीप कुमार केसरवानी पुत्र गंगा प्रसाद की परचून की दुकान है। बताया गया है कि बुधवार को सुबह जब दिलीप कुमार केसरवानी सुबह दुकान खोला तो देखा कि वन विभाग के पीछे लगे जंगले का सरिया कटा था। चोरों ने पन्द्रह टीन फार्च्यून तेल, बादाम, काजू, तमाम प्रकार के सामान चोरी कर ले गए। दिलीप कुमार के अनुसार लगभग पचास हजार का फुट कर सामानों और लगभग पचास हजार के ऊपर तेल चोर चोरी कर ले गए। भुक्तभोगी दिलीप कुमार ने मऊआइमा थाने में तहरीर दी कर अज्ञात चोरों के खिलाफ मुकदमा दर्ज करा दिया है।

संविलियन उच्च प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों व बच्चों ने निकाली जागरूकता रैली

मेजा रोड। शासन के निदेर्शानुसार सर्व शिक्षा अभियान को व्यापक बनाने के लिए विद्यालयों में शिक्षा के लिए नए सत्र की शुरूआत होने पर जगह जगह जागरूकता रैली निकाली जा रही है। इसी कड़ी में बुधवार को संविलियन उच्च प्राथमिक विद्यालय गुरुदत्त का पूरा विकासखंड उरुवा मेजा प्रयागराज के शिक्षकों व छात्र-छात्राओं द्वारा स्कूल चलो अभियान के तहत जागरूकता रैली निकाली गई। इस जागरूकता रैली में बच्चों ने तख्तियों पर लिखी हुई स्लोगन को हाथों में लेकर आधी रोटी खाएंगे, स्कूल जरूर हम जाएंगे व स्कूल चलो, स्कूल चलो के नारे लगाते हुए आगे बढ़ रहे थे। शिक्षा के मौलिक अधिकार को व्यापक रूप से बढ़ावा देने के लिए यह अभियान चलाया जा रहा है। विद्यालय के प्रधानाचार्य शिव चरन ने बताया कि केंद्र व प्रदेश सरकार के निदेर्शानुसार सर्व शिक्षा अभियान के तहत साक्षरता मिशन को बढ़ावा देने के लिए गांव के उन बस्तियों को प्राथमिकता दी गई जहां गरीब व मजदूर तबके के लोग रहते हैं जो किसी न किसी रूप में शिक्षा से वंचित रहते हैं। आगे उन्होने बताया कि इस जागरूकता अभियान में क्षेत्रीय लोगों का भरपूर सहयोग मिल रहा है। इस जागरूकता अभियान रैली में मुख्य रूप से प्रधानाध्यापक शिव चरन, सहायक अध्यापक सना अलमास, भरत लाल, आशीष कुमार, कृष्ण मुरारी, अखिल परमेश सहित विद्यालय के छात्र-छात्राओं ने हिस्सा लिया।

शेरेपुस्ती : कब्रिस्तान पर जबरन हो रहा अवैध कब्जा

सीओ मेजा,कोतवाल,तहसीलदार, चकबंदी अधिकारी आदि मौके पर जा कर कर चुके हैं निरीक्षण

कोराव। तहसील कोरांव के ग्राम पंचायत महुली थाना कोरांव में कब्रिस्तान पर अवैध कब्जा कर लिए जाने की शिकायत सक्षम अधिकारियों से शिकायतं के बावजूद भी तथा मौके पर निरीक्षण किए जाने नोटिस दिए जाने के बाद आज तक नहीं हटा जिससे लोगों में असंतोष व्याप्त हैं। बता दें कि ग्राम महुली की कब्रिस्तान संख्या 1515 पर ग्राम के ही एक महिला विमला देवी पत्नी सूर्यलाल पाल आदि द्वारा अवैध कब्जा कर लिया गया है। जबकि इसके पूर्व से भी उसी कब्रिस्तान की भूमि पर अवैध रूप से मकान भी बना रखे हों लोग,किंतु उसका विरोध नहीं बल्कि नया अवैध अतिक्रमण को हटवाए जाने की ग्राम वासियों ने मांग की है। इस संदर्भ में उच्च स्तरीय शिकायत पर शहायक पुलिस आयुक्त मेजा वी के मिश्रा थाना प्रभारी धीरेंद्र सिंह,एसडीएम तत्कालीन कोराव,तहसीलदार कोरांव,कानून गो, लेखपाल महुली नायब तहसीलदार,और चकबंदी अधिकारी कोरांव आदि मौके पर निरीक्षण कर अतिचारियो को नोटिस जारी कर अवैध अतिक्रमण कब्रिस्तान से हटाने की चेतावनी दी थी। किंतु अभी तक अतिचारी कब्जा हटाने के पक्ष में नहीं है। उल्टा तरह तरह की धमकियां भी शिकायत कताओं को दे रही है। अल्पसंख्यक वर्ग के लोगों का कथन है कि कब्रिस्तान से तत्काल अवैध कब्जा हटवाया जाए अन्यथा और भी लोग कब्जा कर लेंगे। इससे एक वर्ग विशेष में कब्जे न हटाए जाने को ले कर असंतोष व्याप्त है साथ ही इसी बात को ले कर तनाव भी हो सकता है।

घूरपुर के बीकर गांव में गुहराज के प्रतिमा पर माल्यार्पण करते सदस्य व रैली निकालते बच्चे

भगवान राम के सखा राजा गुहराज निषाद की प्रतिमा पर माल्य आर्पण, पुष्प वर्षा कर मनाई जयंती

अखंड भारत संदेश

घूरपुर। घूरपुर के बीकर गांव में निषादराज संघर्ष समिति ने बुधवार के दिन भगवान राम के सखा राजा गुहराज निषाद की प्रतिमा पर माल्यार्पण और पुष्प वर्षा कर धूमधाम से जयंती मनाई। लोगों ने गुहराज के प्रतिमा की आरती कर हवन की। इस अवसर पर समिती के वक्ताओं ने अपने सम्बोधन में कहा कि जब श्रीराम को चौदह वर्ष का वनवास हुआ था। तब महराजा गुह्वराज निषाद ने अपने बाल सखा (बचपन के मित्र), मयार्दा पुरुषोत्तम श्रीराम को नाव से नदी पार कराई थी, इससे यह स्पस्ट होता है कि पारम्परिक रूप से नदियाँ निषादों,मछुवारों की थी, क्यों कि सदियों से निषाद समुदाय ने नदी मे रोजगार के रूप मे खेती करके,मछली पकड़ कर, नाव से लोगों को पार उतार कर व बालू निकाल कर अपना जीवन यापन करते चले आ रहे थे। लेकिन निषाद समुदाय को इस बात से बहुत दुख है कि श्रीराम के नाम पर बनी अब तक की सभी सरकारों ने नदियों मे निषादों के विरुद्ध गलत नियम बनाकर नदियों को बडे. माफिया व बडे. पूंजीपतियों को फायदा पहुँचाने के लिए उनके हवाले करने का ही काम किया हैं, जिससे नदी किनारे बसे निषाद व अन्य समुदायों के लाखों परिवार बेरोजगार हो गये हैं। जयंती के अवसर पर बच्चों ने स्लोगन युक्त लिखी तक्तियाँ लेकर रैली निकाली और नारे लगाए, तथा सरकार से माँग किया कि हमको अच्छी शिक्षा दो, हमको मंहगी शिक्षा से मुक्त करो, हमको रोजगार परख शिक्षा दो, हमारे स्वास्थ्य पर ध्यान दो, सरकारी स्कूलों मे सुधार करो, हमको कम्प्यूटर की शिक्षा दो, हर ग्रामसभा मे सरकारी इंटर कॉलेज खोलो, हमको हम अफसर बनेंगे, वकील बनेंगे, इंजीनियर बनेंगे, हम वैज्ञानिक बनेंगे आदि का नारा लगा मांगे बुलंद की।इसके बाद प्रसाद वितरण किया गया । इस मौके पर निषादराज मंदिर के पुजारी महानंद निषाद , मंदिर संयोजक नन्हे मल्लाह ,संयोजक साहेबलाल निषाद एडवोकेट , अध्यक्ष डा० सुरेशचंद्र निषाद, उपाध्यक्ष सुरेश निषाद,अतुल कुमार पटेल (प्रधान) प्रवींण कुमार सिंह यादव (पूर्व प्रधान) गुलाब सिंह पटेल, राममूरत निषाद, राम आसरे निषाद महेश निषाद, विनोद निषाद,विजय निषाद(लल्ला) प्रसोत्तम निषाद,बैजू निषाद, संजय निषाद आदि लोग सहित भारी संख्या में लोग उपस्थित रहे।

श्रीकृष्ण रुक्मिणी विवाह प्रसंग सुनकर देखकर भावविभोर हुए राचनपुर बघेड़ी गांव के निवासी

जंघई। उर्मिला कुंज राचनपुर बघेड़ी गांव में आयोजित श्रीमद्भागवत कथा के छठवें दिन की कथा में कथा वाचक सुश्री प्रज्ञा देवी श्री धाम वृंदावन ने भगवान की अनेक लीलाओं में श्रेष्ठतम लीला रास लीला का वर्णन करते हुए बताया कि रास तो जीव का शिव के मिलन की कथा है यह काम को बढ़ाने की नहीं काम पर विजय प्राप्त करने की कथा है। उद्धव चरित्र, महारासलीला व रुक्मिणी विवाह का वर्णन करते हुए कहा कि गोपियों ने भगवान श्रीकृष्ण से उन्हें पति रूप में पाने की इच्छा प्रकट की। भगवान श्रीकृष्ण ने गोपियों की इस कामना को पूरी करने का वचन दिया अपने वचन को पूरा करने के लिए भगवान ने महारास का आयोजन किया। इसके लिए शरद पूर्णिमा की रात को यमुना तट पर गोपियों को मिलने के लिए कहा गया। सभी गोपियां सज-धजकर नियत समय पर यमुना तट पर पहुंच गईं। कृष्ण की बांसुरी की धुन सुनकर सभी गोपियां अपनी सुध-बुध खोकर कृष्ण के पास पहुंच गईं। उन सभी गोपियों के मन में कृष्ण के नजदीक जाने, उनसे प्रेम करने का भाव तो जागा भगवान ने रास आरंभ किया माना जाता है कि वृंदावन स्थित निधिवन ही वह स्थान है, जहां श्रीकृष्ण ने महारास रचाया था। यहां भगवान ने एक अद्भुत लीला दिखाई थी, जितनी गोपियां उतने ही श्रीकृष्ण के प्रतिरूप प्रकट हो गए। सभी गोपियों को उनका कृष्ण मिल गया और दिव्य नृत्य व प्रेमानंद शुरू हुआ। रुक्मिणी विवाह का वर्णन करते हुए कहा कि भगवान श्रीकृष्ण ने सभी राजाओं को हराकर विदर्भ की राजकुमारी रुक्मिणी को द्वारका में लाकर उनका विधिपूर्वक पाणिग्रहण किया। कार्यक्रम आयोजक सज्जन शुक्ल शिक्षक, समाजसेवी, बिंदु शुक्ल, संजय शुक्ल, शिवम शुक्ल, अमन शुक्ल, अंश शुक्ल, अनुभव शुक्ल, अनुराग शुक्ल ने आगंतुकों का स्वागत अभिनंदन किया एवं आरती प्रसाद वितरण करवाया। इस अवसर पर आचार्य पंडित सुरेश दुबे, भजन गायिका प्रियंका भजन गायक पवन प्रीत, अनुराग तिवारी आदि रहे।

कैंब्रिज हाईस्कूल एंड कॉलेज में प्रथम स्थान पाने वाले बच्चों को मिला सम्मान, वार्षिक परिणाम घोषित

अखंड भारत संदेश

शंकरगढ़। कैंब्रिज हाईस्कूल एंड कालेज शंकरगढ़ में बुधवार को शैक्षिक सत्र 2022-23 का परीक्षा परिणाम घोषित किया गया। कक्षा में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान पाने वाले विद्यार्थियों को सम्मानित किया गया। अलग-अलग कक्षाओं के विद्यार्थियों में प्रथम स्थान पर आकाश, आर्यन, अवनी, ऋतिक, सना, आस्था, आस्था मिश्रा, उत्कर्ष, शिखा, आदित्य गुप्ता, वैशाली, दीनदयाल, अंशिका और समीक्षा सोनी रहीं। जबकि द्वितीय स्थान पाने वालों में शिवी, अथर्व, अक्षत, अभिषेक, इकरा, अनन्या, शिखा, अमन, वीर, आयुष, अमृता, आर्यन, रश्मि, अमित सोनी, साक्षी, काजल और तृतीय स्थान पर जाह्नवी, युवराज, अंशिका, आराध्या, ओजस, सताक्षी, सुब्रत सृष्टि, कनक, आदित्य राज, अंशिका, शुभम सिंह, आर्यन, यशी एवं अनु रहीं। विद्यालय के प्रबंधक संतोष त्रिपाठी ने सभी बच्चों के उज्ज्वल भविष्य की कामना की। कहा कि बच्चे ही देश के कर्णधार हैं। इनके शिक्षा एवं संस्कार पर ध्यान देने की आवश्यकता है। इस अवसर पर अभिभावकों में सुरेंद्र श्रीवास्तव, आनंद गुप्ता, शिवनरेश तिवारी, अहमद अली, आशुतोष त्रिपाठी, रवि त्रिपाठी, पंकज कुमार मिश्र, दिनेश केसरवानी आदि उपस्थिति दर्ज कराई। शिक्षकों में प्रशासनिक अधिकारी बालेन्द्र पांडेय, मणिशंकर दुबे, मनोज तिवारी, सौरव प्रकाश, पंकज मिश्र, धर्मराज कुशवाहा, अखिल देशपांडे, पंकज श्रीवास्तव, दीपक केसरवानी, नवीन, राजेश गोस्वामी, रीतू सुसारी, सिम्मी गुप्ता, मीरा श्रीवास्तव, स्मिता राव, रेखा सिंह, दीपा, रीना गोस्वामी, मधु केसरवानी, याज्ञवल्क्य द्विवेदी आदि उपस्थित रहे।

खबर संक्षेप

मेजा में चला प्रशासन का बुलडोजर

मेजा रोड। मांडा थाना क्षेत्र के दिघिया गांव के चकमार्ग पर अवैध कब्जे को लेकर न्यायालय के आदेशा के बाद प्रशासन बुलडोजर लेकर पहुचां। ग्रामीणों द्वारा किए गए अवैध कब्जे पर प्रशासन ने बुलडोजर चलाकर ध्वस्त करा दिया। प्रशासन ने सख्त निर्देश देते हुए कहा कि सरकारी भूमि पर अवैध कब्जा करने वालों पर मुकदमा दर्ज किया जाएगा।मेजा तहसील क्षेत्र के मांडा थाना अंतर्गत दिघिया गांव निवासी राम नारायण व शिव नारायण पुत्र प्रयाग द्वारा बीते कई वर्षों से गांव की सड़क पर अवैध कब्जा किया गया था। इसकी कई ग्रामीणों द्वारा इलाहाबाद उच्च न्यायालय में याचिका दायर की गई थी। मामला कई वर्षों से कोर्ट में विचाराधीन था। बीते मंगलवार को कोर्ट के आदेशानुसार मेजा एसडीएम विनोद पांडेय बुधवार को टीम के साथ गांव बुलडोजर लेकर पहुंचे।

नैनी सेंट्रल जेल में बंद पूर्व प्रधान की मौत

अखंड भारत संदेश

प्रयागराज। सेंट्रल जेल नैनी के विचाराधीन कैदी की बीमारी की वजह से 5 अप्रैल को मौत हो गई। उसे 4 अप्रैल को स्वरूपरानी नेहरू चिकित्सालय में भर्ती कराया गया था। वह दही हत्या का भोग में 27 अक्टूबर 2022 से अपने इकलौते बेटी के साथ नैनी सेंट्रल जेल में बन्द था। मृतक अपने गांव का पूर्व प्रधान भी था। गंगानगर के थरवई थानांतर्गत पडिला गांव निवासी सुरेश चंद्र यादव (62) पुत्र कड़ेदीन यादव पूर्व ग्राम प्रधान है। उसके नौ बेटियां और एक बेटा शंकर लाल यादव है। सुरेश चंद्र यादव ने अपने सभी बच्चों की शादियां कर चुका है। 15 मई 2022 को उसने अपने इकलौते बेटे शंकर की शादी पुष्पा यादव के साथ हुई थी। शादी के बाद ही घर में कला शुरू हो गई थी। 27 अक्टूबर 2022 को पुष्पा देवी अपनी ससुराल में कमरे के अंदर पंखे में साड़ी के फंदे से लटकी हुई पाई गई थी। पुलिस ने शव का पोस्टमार्टम कराया था। जिसमें हैंगिंग से मौत की पुष्टि हुई थी। उसके मायके वालों ने शंकर लाल यादव और सुरेश चंद यादव के साथ सास बच्ची देवी के खिलाफ दहेज हत्या का मुकदमा दर्ज कराया था।

जेल जाने के बाद से ही तबीयत खराब चल रही थी

पुलिस ने शंकर लाल यादव और सुरेश चंद्र यादव को गिरफ्तार कर जेल भेज दिया था। तब से पिता पुत्र दोनों जेल में थे। जेल जाने के बाद से ही पूर्व प्रधान सुरेश चंद्र की तबीयत खराब चल रही थी। उसका पहले नैनी सेंट्रल जेल हॉस्पिटल में इलाज चल रहा था। वहां पर हालत बिगड़ने पर 4 अप्रैल को पुलिस अभिरक्षा में उसे एसआरएन हॉस्पिटल भेजा गया था। जहां इलाज के दौरान 5 अप्रैल को उसकी मौत हो गई। सूचना के बाद परिवार के लोग पहुंचे। पुलिस ने शव को पंचायत रामा करके पोस्टमार्टम हाउस भेज दिया है।

माफिया अतीक के शूटर अब्दुल कवि ने किया सरेंडर

विधायक राजू पाल की हत्या के बाद से चल रहा था फरार

प्रयागराज। माफिया अतीक अहमद के शूटर अब्दुल कवि ने बुधवार को लखनऊ की अदालत में सरेंडर कर दिया। वह विधायक राजू पाल की हत्या 25 जनवरी 2005 के बाद से ही फरार चल रहा था। वह कौशांबी के सरायअकिल थाना क्षेत्र के भखंदा गांव निवासी है। उमेश पाल की हत्या के बाद पुलिस ने उसका मकान बुलडोजर से ढहा दिया था। उसका भाई कादिर भी गिरफ्तार कर लिया गया है और कई करीबियों सहित रिश्तेदार भी जेल भेजे गए हैं।उसके मकान के ध्वस्तीकरण के दौरान बड़ी संख्या में असलहे बरामद किए गए थे। इसके बाद पुलिस ने गांव में उसके करीबियों और रिश्तेदारों के यहां भी छापेमारी कर बड़ी संख्या में लाइसेंसी और गैर लाइसेंसी असलहों का जखीरा बरामद किया था। पुलिस ने उसे भगोड़ा घोषित करते हुए उसके सिर पर 50 हजार का इनाम रखा है। ताबड़तोड़ कार्रवाई के बाद आखिरकार अब्दुल कवि ने कोर्ट में सरेंडर कर दिया। अब पुलिस उसे प्रयागराज लाकर पूछताछ कर सकती है। पुलिस और एसटीएफ के अलावा सीबीआई भी उसकी सरगर्मी से तलाश कर रही थी।

पीएम आवास में धांधली को लेकर बीडीओ को सौंपा सात सूत्रीय ज्ञापन

करछना। भारतीय किसान यूनियन (भानु) गुट के किसानों ने बुधवार को विकासखंड करछना कार्यालय पर पंचायत का आयोजन किया। जिसमें भारतीय किसान यूनियन भानु के पदाधिकारियों ने पिछले एक महीने में संगठन की ओर से की गई मांगों और शासन प्रशासन की तरफ से हुई कार्रवाइयों की समीक्षा की। किसान हितों में महीने भर में क्या-क्या कार्य किए गए, सभी पदाधिकारियों से उसका ब्यौरा लिया गया। उसके बाद खंड विकास अधिकारी करछना को एक ज्ञापन सौंपकर 7 सूत्रीय मांग की गई।भारतीय किसान यूनियन (भानु) के मंडल संरक्षक कृष्ण बली सिंह, जिला संगठन मंत्री अनिल बिंद, ब्लॉक अध्यक्ष मीनाक्षी, संदीप कुमार, राहुल सिंह, बीके सिंह, रागिनी देवी, सुमन अवस्थी समेत दर्जनों लोगों ने पंचायत में हिस्सा लिया। इस दौरान पदाधिकारियों ने कहा कि क्षेत्र में प्रधानमंत्री आवास योजना में जिन पात्र लाभार्थियों का नाम पात्रता सूची में पैसा न मिलने के कारण अपात्र किया गया है। उनकी जांच कराई जानी चाहिए। पीएम आवास योजना में हो रहे भ्रष्टाचार की जांच करने की भी मांग की गई। साथ ही वृद्धा, विधवा, विकलांग, पेंशन एवं अन्य योजनाओं का लाभ कैंप लगाकर पात्र लोगों को दिए जाने को कहा गया।खंड विकास अधिकारी करछना को शॉप पर गए मांग पत्र में किसान संगठन के लोगों ने क्षेत्र के देहली भगेसर गांव में पीएम आवास में हुई हेरा फेरी की जांच कराकर पात्र लोगों को आवास आवंटित कराने और दोषियों के खिलाफ कार्रवाई करने की मांग की। मांग पत्र में मुंगारी ग्राम सभा में मनरेगा के तहत काम करने वाले 67 मजदूरों की 2 माह की मजदूरी दिलाने और इसी गांव की प्रियंका देवी पत्नी मनोज कुमार का नाम पीएम आवास योजना की पात्रता सूची में होने के बावजूद आवास ना मिलने की जांच कराने की मांग की गई। बैठक में निर्णय लिया गया कि अगली पंचायत मई में की जाएगी।

मोबाइल शॉप में 10 लाख की चोरी

अखंड भारत संदेश

प्रयागराज। शहर के फाफामऊ थाना क्षेत्र में बसना नाला पुल पंचर रोड पर मोबाइल शॉप का शटर और गेट का ताला काटकर अंदर घुसे चोर ने एक लाख रुपए नकद और साढ़े नौ लाख रुपए के मोबाइल हैंडसेट उठा ले गए। खटपट की आवाज सुनकर पड़ोसी ने दुकान मालिक को सूचना दी।भोर में 3:30 बजे के आसपास दुकान मालिक पुलिस को लेकर मौके पर पहुंचा। तो अंदर दो चोर छिपे मिल गए। जिन्हें पुलिस के सामने पब्लिक ने पकड़ कर पीट कर पुलिस को सौंप दिया। पुलिस उनके बाकी साथियों के बारे में पूछताछ कर रही है। सीसीटीवी में चोरों की संख्या सात लोगों की दिख रही है।गंगापार के फाफामऊ थाना क्षेत्र के रंगपुरा चकिया गांव निवासी प्रदीप कुमार यादव पुत्र रोशन लाल यादव फाफामऊ के बसना नाला पुल के समीप पंचर रोड पर प्रदीप टेलीकॉम के नाम से मोबाइल की शॉप चलाता है। उसकी यह मोबाइल शॉप क्षेत्र की बड़ी दुकानों में गिनी जाती है। रोज की भांति मंगलवार की रात में वह दुकान बंद कर-के घर चला गया था।

पड़ोसी ने दी दुकान मालिक को सूचना

बुधवार भोर में 3:00 बजे उसकी दुकान के पड़ोस में रहने वाले गोलू ने फोन करके बताया कि उनकी शॉप के अंदर कुछ लोग अंदर घुसे है। शटर और गेट का ताला टूटा हुआ है। प्रदीप ने अपने मोबाइल पर दुकान में लगे सीसीटीवी कैमरे को चेक किया। तो दुकान के अंदर सात से आठ लोग दिख रहे थे। तुरंत प्रदीप वहां से फाफामऊ थाने में फोन कर सूचना दिया। सिपाहियों के साथ आधे घंटे के अंदर मौके पर पहुंच गया। तब तक सारे चोर भाग चुके थे। दो चोर अंदर रह गए थे। जिन्हें पकड़ लिया गया है। सीसीटीवी कैमरे की फुटेज और पकड़े गए चोरों के आधार पर उनके साथियों की तलाश की जा रही है।

मोबाइल शॉप से चोरी गए प्रत्येक फोन की कीमत 15 से 20 हजार

फाफामऊ थाने में दी गई तहरीर के मुताबिक प्रदीप कुमार ने बताया कि चोरों ने 15 से 20 हजार रुपए की कीमत के तकरीबन 50 मोबाइल हैंडसेट और कैश बॉक्स से एक लाख रुपए नकद चुरा लिया है। उन्होंने बताया कि एक बैग में सबसे ज्यादा मोबाइल भर कर रखे हुए थे। जो चोर ले जाना चाह रहे थे। लेकिन ले नहीं जा पाए। पकड़े गए दोनों चोर बाहर के हैं। उनके साथियों के बारे में पुलिस पता लगा रही है।फाफामऊ थानाध्यक्ष अश्विनी सिंह का कहना है कि छानबीन की जा रही है। बाकी चोरों को भी जल्द पकड़ लिया जाएगा। सभी चोर मास्क लगाए थे।

ट्रेन से कट कर अज्ञात युवक की मौत शव के हुए कई टुकड़े

लोकापुर विशानी के पास देर शाम पसेंजर ट्रेन की जद में आया था

मऊआइमा। ट्रेन से कट कर एक अज्ञात युवक की मौत हो गई। जिसकी शिनाख्त नहीं हो पायी है। सूचना पर पहुची पुलिस शव के कई टुकडों को एकत्रित कर पोस्टमार्टम के भेज दी है। मऊआइमा थाना क्षेत्र के ग्राम लोकापुर विशानी गांव के निकट से गुजरी4 रेलवे ट्रेक से बुधवार को देर शाम प्रयागराज लखनऊ पैसेंजर ट्रेन के गुजरते समय एक युवक आ गया।जिसके परखच्चे उड गए। बताया गया है कि ट्रेन शव को लगभग सौ मीटर की दूरी तक घसीटते हुए प्रतापगढ़ वाया लखनऊ की ओर चली गई। शव के कई भाग के टुकड़ों को सब इंस्पेक्टर सूर्यप्रकाश हमराही पुलिसकर्मियों के साथ पहुंच कर एकत्रित कर पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया है। सब इंस्पेक्टर ने बताया कि घटना स्थल सोरांव आता परन्तु शव सौ मीटर तक घसीटते हुए मऊआइमा के ग्राम लोकापुर विशानी में आ कर कई टुकड़ों में पड़ा था। वैसे सोरांव पुलिस को सूचना देकर मऊआइमा पुलिस पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया है। बताया गया है कि अज्ञात युवक की उम्र लगभग 40 वर्ष होगी। वह ब्लैक लोवर लाल शर्ट पहने हुए है।

प्रधान अध्यापिका रुकैया अब्बासी सस्पेंड

अखंड भारत संदेश

उच्चाधिकारियों के आदेशों की अवहेलना और साथी टीचर्स के साथ दुव्यवहार करना पड़ा महंगा

प्रयागराज। उच्चतर प्राथमिक विद्यालय (संविलियन) दारागंज की प्रधानाध्यापिका रुकैया अब्बासी को प्रयागराज के जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी ने सस्पेंड कर दिया है। रुकैया अब्बासी पर मनमाना कार्य व्यवहार करने उच्चाधिकारियों के आदेशों की अवहेलना करना, साथी टीचर और छात्रों के साथ दुर्व्यवहार करने और स्कूल में भय का माहौल पैदा करने का आरोप है। खंड शिक्षा अधिकारियों की 2 सदस्य जांच टीम की रिपोर्ट के बाद बीएसए ने यह कार्रवाई की है। निलंबन की अवधि के दौरान रुकैया अब्बासी को उच्च प्राथमिक विद्यालय क्रमोत्तर राजापुर से अटैच किया गया है। रुकैया इससे पहले भी सस्पेंड हो चुकी हैं।

स्कूल की टीचर्स ने सामूहिक रूप से रुकैया अब्बासी की इरअ से की थी शिकायत उच्चतर प्राथमिक विद्यालय (संविलियन) दारागंज में कार्यरत शिक्षिकाओं द्वारा संयुक्त रूप से प्रधानाध्यापिका रुकैया अब्बासी की बेसिक शिक्षा अधिकारी से शिकायत की थी। शिकायत में कहा गया था कि प्रधानाध्यापिका रुकैया अब्बासी आए दिन अपने स्टाफ टीचर्स और बच्चों के साथ अभद्रता करती हैं। शासन के निदेशों और उच्चाधिकारियों के आदेशों की अवहेलना करती हैं।इसकी शिकायत को गंभीरता से लेते हुए जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी प्रवीण कुमार त्रिपाठी ने 16 जुलाई 2022 को खंड शिक्षा अधिकारी सैदाबाद वह खंड शिक्षा अधिकारी मऊआइमा की संयुक्त जांच समिति गठित कर दी थी।

जांच समिति ने अपनी रिपोर्ट बीएसए को सौंपी थी, जिसमें रुकैया अब्बासी पर साथी शिक्षिकाओं द्वारा लगाए गए आरोप सही पाए गए। इसके बाद बीएसए ने 26 सितंबर 2022 को प्रतिकूल प्रवृष्टि देते हुए आदेश दिया था कि अपने कार्यव्यवहार में व्यापक सुधार लाएं।इसके बाद खंड शिक्षा अधिकारी नगर द्वारा 23 मार्च 2023 को बीएसए को संयुक्त जांच रिपोर्ट पेश की। जांच रिपोर्ट में कहां गया था कि रुकैया बासी के कार्य बिहार में किसी भी तरह का सुधार नहीं पाया गया है। लिहाजा रुकैया अब्बासी द्वारा अपने विद्यालय के शिक्षकों और छात्रों से दुर्व्यवहार किए जाने विद्यालय में भय का माहौल पैदा करने, सहकर्मियों से अनुचित व्यवहार करने निपुण लक्ष्यों को प्राप्त करने में बाधा पहुंचाने, सपोर्टिव सुपरविजन में असहयोग किए जाने, मनमानी कार्य किए जाने, विभागीय अधिकारियों द्वारा दिए गए आदेशों-निदेशों की अवहेलना किए जाने, टाइम एंड मोशन का अनुपालन न किए जाने, विभागीय योजनाओं के कर्तव्य में लापरवाही बरतने के आरोप में उन्हें तत्काल प्रभाव से निलंबित किया जाता है। निलंबन की अवधि में रुकैया अब्बासी को जीवन निर्वाह भत्ते की धनराशि देय होगी। रुकैया के निलंबन प्रकरण की जांच खंड शिक्षा अधिकारी प्रयागराज ओम प्रकाश मिश्रा को सौंपी गई है।

लोकार्पण एवं शिलान्यास की जाने वाली परियोजनाओं का सजीव प्रसारण आज

अखंड भारत संदेश

मुख्यमंत्री उप्र द्वारा परियोजनाओं का लोकार्पण, शिलान्यास तथा पुस्तकों का विमोंचन

प्रयागराज। नगरीय निकायों में नागरिक सुविधाओं के स्तरोनयन, नगरों को साफ एवं सुसज्जित रखने तथा नागरिकों को मूलभूत सुविधाएं उपलब्ध कराने हेतु नगर विकास विभाग, नगरीय रोजगार एवं गरीबी उन्मूलन का कार्यक्रम विभाग द्वारा अनेक महत्वपूर्ण कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। उक्त के क्रम में नगरीय निकायों की नयी परियोजनाओं का शिलान्यास, लोकार्पण व विभाग की योजनाओं से सम्बन्धित अनेक पुस्तकों का विमोचन, दिनांक 06 अप्रैल, 2023 को पूर्वान्ह 11:00 बजे माननीय मुख्यमंत्री जी, उत्तर प्रदेश के कर-कमलों द्वारा नगरीय निकाय निदेशालय, गोमतीनगर विस्तार, सेक्टर-7, लखनऊ स्थित सभागार में किया जाना प्रस्तावित है। लोकार्पण एवं शिलान्यास की जाने वाली परियोजनाओं का लाइव/सजीव प्रसारण प्रदेश के समस्त जिला मुख्यालयों तथा नगर निगम प्रयागराज में एन0आई0सी0 के माध्यम से किया जायेगा। नगर निगम प्रयागराज के परिसर स्थित नई बिल्डिंग के नवनिर्मित हॉल में बडी स्क्रीन लगाकर कार्यक्रम को जूम के माध्यम से लिस्टनिंग मोड ' में जोडा गया है, जिसमें मुख्यमंत्री जी के कार्यक्रम का लाइव प्रसारण नगर निगम क्षेत्र के गणमान्य एवं प्रबुद्धजनों, कर्मिकों एवं लाभार्थियों के साथ देखा जायेगा। मुख्यमंत्री जी के कार्यक्रम का लाइव प्रसारण कार्यक्रम में, नगर निगम प्रयागराज के सांसद, महापौर, विधायक के साथ ही गणमान्य एवं प्रबुद्धजनों, कर्मिकों एवं लाभार्थियों से आग्रह है कि उक्त कार्यक्रम में आपकी गरिमामयी उपस्थिति अपेक्षित है।

प्रयागराज नगर निगम 18 स्थानों पर बनेगा स्ट्रीट वेंडिंग जोन

अखंड भारत संदेश

1800 रेहड़ी दुकनादारो को होगा फायदा, महिला स्ट्रीट वेंडर्स के लिए नगर निगम बन रहा पिंक जोन

प्रयागराज। शहर के स्ट्रीट वेंडरों के लिए एक सुकून भरी खबर है। स्ट्रीट वेंडरों की सहूलियत के लिए प्रयागराज नगर निगम ने नैनी, फाफामऊ और झूंसी में वेंडिंग जोन का निर्माण शुरू करा दिया है। निर्माण कार्य पूरा होते ही इसे रेहड़ी दुकानदारों को आवंटित कर दिया जाएगा।नगर आयुक्त चन्द्र मोहन गर्ग के अनुसार स्?ट्रीट वेंडरों के लिए नगर निगम की ओर से संगम नगरी के 18 स्थानों पर वेंडिंग जोन बनाया जा रहा है। झूंसी ,नैनी और फाफामऊ के अलावा शहर के 15 स्थानों को इसके लिए चिन्हित किया गया हैं। जहाँ वेंडिंग जोन बनेगा। प्रत्येक वेंडिंग जोन में 100 से अधिक दुकाने होंगी । इस तरह कुल 1800 स्ट्रीट वेंडर्स को इसका सीधा लाभ मिलेगा। ये सभी वेंडिंग जोन 3 महीने के अन्दर बनकर तैयार हो जायेंगे।

पिंक जोन में होगी पुलिस चौकी की स्थापना

प्रयागराज नगर निगम महिलाओं के लिए भी अलग से वेंडिंग जोन बना रहा है। नगर आयुक्त चन्द्र मोहन गर्ग के मुताबिक इन पिंक वेंडिंग जोन के लिए स्थान का चिन्हीकरण किया जा रहा है। पिंक वेंडिंग जोन में महिलाओं की सुरक्षा के लिए अलग से पिंक पुलिस बूथ के लिए भी जगह तलाशी जा रही है। वेंडिंग जोन के अलावा शहर में जायके के शौकीनों के लिए नाइट फूड स्ट्रीट का भी निर्माण किया जा रहा है। जिसमें रात्रि के समय लोग स्ट्रीट फूड का आनंद ले सकेंगे। स्मार्ट सिटी प्रयागराज की तरफ से इसकी शुरूआत हो रही है। जिसमे महंगे रेस्टोरेंट का जायका स्थानीय लोग कम दामों में इन नाइट फूड स्ट्रीट में ले सकेंगे।

रेहड़ी दुकानदारों पर मेहरबान सरकार

प्रदेश की योगी सरकार शहरी क्षेत्र में पथ विक्रेताओं के लिए अलग-अलग शहरों में वेंडिंग जोन का निर्माण करा रही है। इससे जहां रेहडी पटरी दुकानदारों को एक तय स्थान पर नियमित रूप से अपना रोजगार करने का अवसर मिलेगा। वहीं इन स्थानों पर नगर निगम उन्हें कई सहूलियत भी प्रदान करेगा। स्मार्ट सिटी प्रयागराज में 1800 वेंडिंग दुकानें बनाने का कार्य तेजी से शुरू है।

विवाहिता ने मायके में लगाई फांसी

प्रयागराज। फुलपुर तहसील के सराय थाना क्षेत्र में एक विवाहिता ने दुपट्टा का फंदा बनाकर फांसी लगा ली। मामले में पुलिस ने विवाहिता के पति के खिलाफ दहेज हत्या की रिपोर्ट दर्ज की है। पुलिस मामले की जांच कर रही है।चन्दौहा सराय सराय इनायत गांव निवासी विद्याधर शुक्ला की बेटी रिचा शुक्ला (27 वर्ष) की शादी नवाबगंज थाना क्षेत्र के महमूदपुर कचरिया के राहुल मिश्रा से 2 साल पहले हुई थी। सुबह करीब 4:30 बजे रिचा ने मायके के घर में फांसी लगा ली। परिजन सो कर उठे तो रिचा को फंदे पर झूलते देख घर में रोना पिटना मच गया। आनन-फानन में रिचा को नीचे उतारा, किंतु उसकी सांसें थम चुकी थीं। घटना की सूचना सराय इनायत पुलिस को दी गई। रिचा का 1 वर्ष का एक बेटा भी है।

पुरानी रंजिश को लेकर हुई मार पीट पांच के खिलाफ मुकदमा

मऊआइमा। पुरानी रंजिश को लेकर दो पक्षों में चल रहे विवाद में एक पक्ष ने पहले मुकदमा दर्ज कराया था। जबकि दूसरे पक्ष ने बुधवार को पांच के खिलाफ मुकदमा दर्ज करा दिया है। मऊआइमा थाना क्षेत्र के गमरहटा गांव में दो पक्षों के बीच पुरानी रंजिश चली आ रही है। एक पक्ष ने सोमवार को मुकदमा दर्ज कराया था। जबकि दूसरे पक्ष से बुधवार को संतोष कुमार पुत्र आयोध्य प्रसाद ने थाने तहरीर दी कर मारने पीटने जान से मारने की धमकी देने का आरोप लगाते हुए अमरनाथ, भगवान, आशा देवी, उमा देवी, खशबू देवी के खिलाफ मुकदमा दर्ज करा दिया है।

स्वस्थ आहार हरी सब्जियां फल सलाद प्रचुर मात्रा में लें : सरिता पटेल

सुपोषण दिवस के अंतर्गत लायंस क्लब प्रयागराज गौरव के बैनर तले दी गई जानकारी

अखंड भारत संदेश

नैनी। बुधवार को सुपोषण दिवस के अंतर्गत लायंस क्लब प्रयागराज गौरव के तले आंगनबाड़ी केंद्र तिगनौता में गर्भवती धात्री एवं अन्य महिलाओं एवं शिशुओं को स्वास्थ्य के प्रति सचेत करते हुए उनको अपने जीवन में स्वस्थ आहार हरी सब्जियां फल सलाद प्रचुर मात्रा में लेने की सलाह दी गई ,एवं बच्चों के नियमित टीकाकरण के बारे में भी जानकारी दी गई गर्भवती महिलाओं की गोद भराई हरी सब्जियां, फल,पोषक अन्न,के साथ किया गया। और 3 से 6 वर्ष के बच्चों का उम्र के हिसाब से वजन एवं लंबाई भी नापी गई। इस अवसर पर चाका ब्लॉक से आई हुई अठट एवं उल्ड द्वारा किए जा रहे टीकाकरण मैं अपना सहयोग प्रदान किया एवं उपस्थित महिलाओं को फल बिस्कुट आदि वितरित किए गए इस अवसर पर चका ब्लॉक की एवं एवं सी एच ओ सहित क्लब के सचिव डॉ रमेश चंद्र डॉ सूर्य नाथ प्रजापति डॉक्टर संतोष यादव आंगनवाड़ी कार्यकत्री सरिता पटेल, उमा मिश्रा राधा, आदि लोग उपस्थित थे।

सिविल लाइंस बस स्टैंड के पास अतिक्रमण हटाने को लेकर नगर आयुक्त से लगाई गुहार

अखंड भारत संदेश

परिवहन निगम के सहयोग से लगवाया जा रहा है अवैध अतिक्रमण इसके एवज में परिवहन निगम को भेजी जाती है मोटी रकम : मोहम्मद शरीफ

प्रयागराज। सिविल लाइंस स्थित रोडवेज बस स्टैंड के पास अतिक्रमण हटाए जाने को लेकर करेली गौस नगर का रहने वाला मोहम्मद शरीफ ने आवेदन पत्र के जरिए अतिक्रमण हटाने के लिए नगर आयुक्त से गुहार लगाई । मोहम्मद शरीफ ने आवेदन के जरिए नगर आयुक्त से कहा है कि सिविल लाइंस रोडवेज बस स्टेशन के सामने महात्मा गाँधी मार्ग प्रयागराज नगर निगम के द्वारा नो वेडिंग जोन घोषित किया गया है ।इसके बावजूद सिविल लाइंस रोडवेज बस स्टेशन के सामने सड़क की दोनों तरफ सड़क की पटरी पर अवैध कब्जा है। जिससे आए दिन भयंकर जाम लगता है आने जाने में लोगों को काफी दिक्कतों का सामना करना पड़ता है । मोहम्मद शरीफ ने आवेदन के जरिए नगर आयुक्त को अवगत कराया है कि यह अवैध कब्जा सिविल लाइंस रोडवेज बस स्टेशन के पीछे रहने वाले मोनू सोनकर, सोनू सोनकर, बंटी सोनकर, राकी सोनकर, सुनील सोनकर उर्फ बग्गा के द्वारा अवैध कब्जा कर अवैध मार्केट लगवायी जा रही है जिससे सिविल लाइंस रोडवेज बस स्टेशन के सामने महात्मा गांधी मार्ग का यातायात बाधित हो रहा है। सामान्य नागरिकों को सिविल लाइंस महात्मा गांधी मार्ग पर जाम का सामना करना पड़ रहा है। सिविल लाइंस रोडवेज बस स्टेशन की तरफ गैलेक्सी होटल के सामने की आधी सड़क पर उपरोक्त लोगों का अवैध कब्जा है। यदि कोई यात्री अपने प्राइवेट वाहन से भी अपने घर के लोगों को छोड़ने आता है अपना वाहन दो पहिया या चार पहिया सड़क की पटरी पर खड़ा कर अपने लोगों को बस पर बैठाने जाता है तो उससे भी ये लोग अवैध रूप से पार्किंग शुल्क के नाम से पैसा वसूल लेते हैं। यदि कोई मना करता है तो उससे मार पीट, गाली-गलौज करते हैं।साथ ही नगर आयुक्त को अवगत कराया है कि अवैध मार्केट में फुटपाथी दुकानों पर घटिया और मिलावटी खाद्य पदार्थों की बिक्री कर रोडवेज यात्रियों की स्वास्थ्य से खिलवाड़ किया जा रहा है ।साथ ही इन दुकानों पर मनमानी दाम वसूला जाता है । मोहम्मद शरीफ अपने आपको ट्रैवेल एजेंसी का संचालक तथा प्रतिष्ठित अखबारों को उतारने सिविल लाइंस रोडवेज बस स्टेशन पर जाती हैं तो उनसे भी पार्किंग शुल्क गुडागर्दी के बल पर मांगा जाता है। न देने पर मार पीट कर पैसा छीन लिया जाता है। अवैध प्राइवेट वाहन स्टैंड बना कर यही से अवैध प्राइवेट बस अड्डा चलवाया जा रहा है ।परिवहन निगम को प्रतिमाह लाखों रूपया की क्षति पहुंचाई जा रही हैं ।साथ ही सिविल लाइंस रोडवेज के सामने महात्मा गांधी मार्ग पर यातायात बाधित किया जा रहा है। मोहम्मद शरीफ ने आवेदन पत्र में वकायदे मान्यनीय इलाहाबाद हाईकोर्ट का हवाला देते हुए कहा है कि सिविल लाइंस महात्मा गांधी मार्ग पर से अतिक्रमण और अवैध कब्जा हटाने का आदेश दिया गया है उसका भी अनुपालन नही हो रहा है।

कार्यालय ग्राम पंचायत बरियावा विकास खण्ड नेवादा जनपद कौशाम्बी

(अल्पकालिक निविदा सूचना)

सर्व साधारण को सूचित किया जाता है कि ग्राम पंचायत बरियावा विकास खण्ड नेवादा जनपद कौशाम्बी में 15 वा केंद्रीय वित्त पंचम राज्य वित्त आयोग,मनरेगा योजना,कायाकल्प योजना,राष्ट्रीय स्वच्छता मिशन के अन्तर्गत शौचालय निर्माण व मरम्मत,नाली निर्माण,नाली मरम्मत,खडन्जा निर्माण,हैण्डपम्प मरम्मत,हैण्डपम्प रिबोर,इण्टरलाकिंग,स्कूल निर्माण व मरम्मत,पंचायत भवन मरम्मत,आंगनबाडी केन्द्र निर्माण व मरम्मत,सोलर लाइट,सोलर पम्प स्ट्रीट लाइट इंटरलॉकिंग स्कूल बाउंड्री एमडीएम सेट कैटल शेड व अन्य कार्यो में प्रयुक्त होने वाली सामग्री आपूर्ति हेतु पंजीकृत फर्मो द्वारा दिनांक 07/04/2023 से 13/04/2023 तक सील बन्द निविदा आमंत्रित की जाती है। जो दिनांक 15/04/20203 को 11 बजे दिन में उपस्थित पंजीकृत फर्मो के समक्ष खोली जायेगी। निविदा स्वीकृत/अस्वीकृत करने का अधिकार अधोहस्ताक्षरी में निहित होगा सामग्री की मात्रा ग्राम पंचायत में स्वीकृत प्राक्कलन के अनुसार पृथक पृथक होगा। निविदा ग्राम पंचायत में वित्तीय वर्ष 2023-24 में कराये जाने वाले सभी कार्यो हेतु प्रभावी होगा।

अखिलेश सिंह
पंचायत सचिव
विकास खण्ड नेवादा
जनपद कौशाम्बी

मिथलेश
ग्राम प्रधान ग्रा0पं0 बरियावा
विकास खण्ड नेवादा
जनपद कौशाम्बी

दो आरोपियो के खिलाफ मारपीट व धमकी का मुकदमा

लालगंज, प्रतापगढ़। कोतवाली पुलिस ने रास्ते मे पीड़ित को घेरकर लाठी डंडे से मारने पीटने तथा गालीगलौज व जानलेवा धमकी को लेकर मंगलवार की रात केस दर्ज किया है। लीलापुर थाना के सगरा सुंदरपुर निवासी मो. मुस्लिम पुत्र जब्बार ने पुलिस को दी गई तहरीर मे कहा है कि बीती सोलह मार्च को वह लालगंज कोतवाली क्षेत्र के नया का पुरवा जा रहा था। रास्ते मे पुरानी रंजिश को लेकर गांव के मो. आजाद पुत्र मकसूद तथा मंसूर के पुत्र मकसूद ने उसे रोककर गाली देना शुरू किया। मना करने पर आरोपी हमलावर हो उठे और डण्डे से पिटाई कर दी। हमले मे पीडित का हाथ टूट गया। राहगीरों के जुटने पर आरोपी पीडित को जानलेवा धमकी देते चले गये। तहरीर के आधार पर पुलिस ने आरोपी मकसूद समेत दो के खिलाफ केस दर्ज किया है।

ऐसी ही गोशालाएं हर जगह होनी चाहिये: विशेष सचिव

विशेष सचिव ने बराछा स्थित गोशाला का किया

अखंड भारत संदेश

प्रतापगढ़। उत्तर प्रदेश शासन के सामान्य प्रषासन के विशेष सचिव राम केवल ने आज बुधवार को बराछा स्थित गोषाला का निरीक्षण किया। गोशाला की साफ-सफाई, चारा, भूसा, चोकर व पानी की व्यवस्था समुचित ढंग से की गई थी।

उन्होंने बायोगैस प्लांट द्वारा बिजली उत्पादन कार्य का भी निरीक्षण किया और इस पर संतोष व्यक्त किया। उन्होंने कहा कि ऐसी की गोषाला

गोशाला में गायों को गुड़ चना खिलाते विशेशज्ञ सचिव राम केवल।

जनपद और प्रदेश में हर जगह होनी चाहिये। विशेष सचिव ने गायों को चने की दाल व गुड़ स्वयं खिलाया और कहा कि गोशाला में अच्छे ढंग से पशुओं को रखने की व्यवस्था ही सबसे बड़ा कार्य होता है। इस अवसर पर पशु चिकित्साधिकारी रत्नेश, पशु चिकित्सा विभाग के ही विनय ने निरीक्षण में पूछे गये प्रश्नों का सहयोगात्मक उत्तर दिया।

इस अवसर पर खाद्य एवं सफाई निरीक्षक संतोष कुमार सिंह, मिथिलेश सिंह, प्रशांत सिंह तथा गोशाला के पांचों कर्मचारी मौजूद रहे। लगभग आधे घंटे के निरीक्षण के बाद विषेष सचिव का काफिला वहां से निकल गया।

लवाना भवानीगंज से दिल्ली को मिली बस की सौगात व्यापारियों में खुशी

अखंड भारत संदेश

प्रतापगढ़ /परियावां। कालाकांकर विकास क्षेत्र अंतर्गत लवाना भवानीगंज बजार से दिल्ली के लिए परिवहन बस सेवा की सौगात पूर्व मंत्री मनोज पांडे विधायक ऊंचाहार के सिफारिश पत्र पर परिवहन मंत्री उत्तर प्रदेश ने ए आर एम रायबरेली को निर्देशित किया था ।

जिस पर ए आर एम एम एल केशरवानी विगत माह में संदीप मिश्रा व जीपी बिंदू को लवाना बजार भेज कर एक सर्वे कराया था उसी क्रम में इस बस का संचालन गत 26 मार्च से 1 अप्रैल तक उक्त बस का संचालन ट्रायल में किया गया था जो अब प्रतिदिन दोपहर 1 बजे लवाना भवानीगंज से सलोन, जगतपुर, डलमऊ, होते हुए कानपुर दिल्ली जाती है और वापस दिल्ली से 2 बजे

दिल्ली के लिये जाते रोडवेज बस।

दिन में निकलती है। बता दें आने जाने के लिए दो बसों का संचालन किया जा रहा है जो दूसरे दिन 12:00 दोपहर को लवाना भवानीगंज पहुंचकर 1 घंटे बाद 1:00 बजे पुनः दिल्ली के लिए रवाना हो रही है। यह बस से लवाना भवानी गंज से प्रतिदिन दिल्ली जाएगी। कई वर्ष पूर्व भी लवाना भवानीगंज से प्रयागराज व कानपुर तथा दिल्ली के लिए शुरू हुई थी जो बंद हो गई थी पुनः बस सेवा उपलब्ध होने से क्षेत्र के लोगों को आवागमन के लिए सुविधा मिली। वहीं परिवहन विभाग को उम्मीद से अधिक लाभ भी हो रहा है इससे विभाग ने लवाना बाजारवासियों को आश्वासन दिया है कि शीघ्र ही प्रतापगढ़, प्रयागराज, लखनऊ के लिए भी यहां से बसें चलाई जाएंगी।

भाजयुमो की बैठक में बोलते जिलाध्यक्ष अंशुमान सिंह

सामाजिक न्याय सप्ताह मनायेगा भाजयुमो

अखंड भारत संदेश

प्रतापगढ़। भाजयुमो कार्यालय पर भाजयुमो जिलाध्यक्ष अंषुमान सिंह की अध्यक्षता में आगामी भाजयुमो कार्यक्रमों की बैठक का आयोजन किया गया। बैठक में जिलाध्यक्ष ने बताया कि स्थापना दिवस 6 अप्रैल से 14 अप्रैल बाबा साहब अंबेडकर की जयंती तक सामाजिक न्याय सप्ताह के रुप में मनाया जाएगा। जिसमें 6 अप्रैल को भाजपा स्थापना दिवस, 7 अप्रैल को प्रमुख स्थानों पर चिकित्सा षिविर, 8 अप्रैल को जिला स्तर पर जनजाति युवाओं के रोजगार हेतु सम्मेलन, 9 अप्रैल को जिला एवं मण्डल स्तर पर श्री अन्न को लेकर जन साधारण खेती, 10 अप्रैल को अनुसूचित जाति की महिलाओं के साथ सहभोज, 11 अप्रैल को महात्मा ज्योतिबा फुले की जयंती पर पुष्पार्चन, 12 अप्रैल को नगर पालिका व नगर पंचायतों में स्वच्छता अभियान, 13 अप्रैल को जलाषयों की मण्डल स्तर पर सफाई व वृक्षारोपण व 14 अप्रैल को बाबा साहब अंबेडकर की जयंती पर गोष्ठी का आयोजन किया गया है। बैठक में नितीष श्रीवास्तव, सुनील सरोज, अर्पित तिवारी, अंकित सिंह, अवनीष चैरसिया आदि मौजूद रहे।

दुर्घटना बाहुल्य क्षेत्र में गतिअवरोधक बनवाये जाने की उठी मांग

लालगंज, प्रतापगढ़। नगर के लालगंज टीकाराम उमापुर मार्ग पर विद्या मंदिर के समीप पुल के पास गतिअवरोधक न होने से दुर्घटनाओं मे बढोत्तरी हो रही है। इस पुल के समीप से ही घुइसरनाथ रोड से संगम चैराहे तक भी नहर पिच मार्ग गुजरती है। इसके कारण प्रायः संगम चैराहे से घुइसरनाथ रोड की तरफ आने वाले वाहन मेन सड़क से गुजर रहे वाहन को देख नही पाते। वाहनों की गति अधिक होने से अक्सर यहां दुर्घटना घटित हो रही है। सरस्वती विद्या मंदिर इण्टर कालेज तथा शिशु मंदिर होने के कारण छोटे छोटे बच्चो व छात्र छात्राओं का भी सड़क पर आवागमन बना रहता है। स्थानीय मनमोहन यादव, आशु शुक्ला, कपूरचंद्र सोनी, विनोद सोनी, हरिमोहन यादव, बृजमोहन यादव आदि ने प्रशासन से दुर्घटना बाहुल्य क्षेत्र होने के कारण यहां गति अवरोधक अविलम्ब बनवाये जाने की मांग उठाई है।

विद्यारंभ संस्कार भारतीय संस्कृत को जागृत करने का अनोखा प्रयास

वर्ल्ड ऑफ वूमेन एजुकेशन का विद्यारंभ संस्कार का हुआ आयोजन

अखंड भारत संदेश

प्रतापगढ़। वर्ल्ड ऑफ वूमेन एजुकेशन चैरा, अमेठी रोड, प्रतापगढ़ पर विद्यारंभ संस्कार का आयोजन किया गया। आचार्य पं0 संतोष कुमार मिश्रा के द्वारा बच्चों का विद्यारंभ संस्कार प्रारंभ कराया गया। विद्यारंभ संस्कार के उपरांत सत्र 2022-23 में प्रत्येक कक्षा के प्रथम, द्वितीय व तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले छात्र-छात्राओं को गोल्ड, सिल्वर एवं ब्रांज मेडल देकर सम्मानित किया गया। कार्यक्रम में फैंसी ड्रेस कंपटीशन असेंबली एवार्ड, बेस्ट थॉट बेस्ट राइटिंग अवार्ड एवं विद्यालय के खिलाड़ियों को पुरस्कृत किया गया।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि

विद्यारंभ संस्कार के आयोजन पर दीप प्रज्जवलन करते मुख्य अतिथि।

के रुप में बोलते हुए एलायंस क्लब इंटरनेशनल के डायरेक्टर रोशनलाल उमरवैश्य ने कहा कि वर्ल्ड आफ वूमेन एजुकेशन द्वारा अंग्रेजी शिक्षा के साथ-साथ भारतीय संस्कृत को जागृत करने का जो अनूठा प्रयास किया गया है, वह अन्य विद्यालयों के लिए अनुकरणीय है। केसरवानी महिला सभा की प्रदेश अध्यक्षा अरुणा केसरवानी ने छात्राओं की प्रस्तुति को सराहते हुए कहा कि यह दशार्ता है कि विद्यालय कुशल नेतृत्व में कार्य कर रहा है। विद्यालय की प्रधानाचार्या निधि शर्मा ने आगंतुकों का स्वागत किया। पूर्व प्रधान शिव मूर्ति सिंह ने कार्यक्रम के अंत में सभी सम्मानित आगंतुकों का प्रबंध समिति की ओर से आभार व्यक्त किया। कार्यक्रम का शुभारंभ श्रेया सिंह, कशिश शर्मा, रिजा महविज, अंशिका सिंह द्वारा प्रस्तुत सरस्वती वंदना व साईं वंदना एवं स्वागत गीत द्वारा किया गया। कार्यक्रम का संचालन तरुण पांडे, विनीता यादव के द्वारा किया गया। कार्यक्रम में साकेत ग्रुप आफ कॉलेज के प्रबंधक अरविंद श्रीवास्तव, प्राचार्या डॉ नीलिमा श्रीवास्तव, अनन्त प्रकाश शुक्ला, अच्युत कुमार शुक्ला, रघुपति प्रकाश उपस्थित रहे।

सांसद विनोद सोनकर प्रधानमंत्री से मिलकर कौशाम्बी के विकास कार्यों की चर्चा

प्रधानमंत्री ने अपने ट्विटर अकाउंट के माध्यम से की थी सराहना

अखंड भारत संदेश

कुंडा, प्रतापगढ़। कौशाम्बी लोकसभा क्षेत्र में चल रही मोदी बैन इन दिनों सुर्खियां बटोर रही है। देश की पहली लोकसभा क्षेत्र है। जहां सांसद विनोद सोनकर ने मोदी बैन की शुरूआत की। आज सुदूर गांवों में बसे ग्रामीण इलाकों में मोदी बैन पहुंच कर लोगों को निःशुल्क चिकित्सा व्यवस्था उपलब्ध करा रही है।

बीते दो सप्ताह पूर्व जब देश के यशस्वी प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की नजर मोदी बैन पर गई तो प्रधानमंत्री मोदी ने अपने ट्विटर अकाउंट से सराहना करते हुए कहा कि अद्भुत प्रयास! जन सेवा के ऐसे अभियान विकास को नई गति देने वाले है। इसके बाद मंगलवार को पीएमओ कार्यालय से सांसद विनोद सोनकर को दिल्ली बुलाया गया। बुधवार को प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी से सांसद

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी से मिलते सांसद विनोद सोनकर।

विनोद सोनकर ने मिलकर कौशाम्बी के विकास कार्यों , कौशाम्बी महोत्सव, सांसद खेल स्पर्धा पर विस्तृत चर्चा करते हुए कौशाम्बी महोत्सव पर आमंत्रित किया। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने बड़ी गंभीरता से विकास कार्यों पर प्रकाशित सांसद खेल स्पर्धा एवं कौशाम्बी महोत्सव की पुस्तिका को देखकर सराहना की। उक्त जानकारी सांसद के मीडिया प्रभारी भूपेन्द्र पाण्डेय ने देते हुए बताया कि कौशाम्बी लोकसभा क्षेत्र में दो बार कमल खिलाने वाले विनोद सोनकर को संगठन ने राष्ट्रीय सचिव के साथ संसदीय आचार समिति लोकसभा का चेयरमैन बनाया है। राज्य के प्रभारी के तौर पर दादरा नगर हवेली एवं दमन दीव के प्रभारी भी है। कौशाम्बी लोकसभा में विकास पुरुष के तौर पर सांसद ने क्षेत्र में अपनी पहचान बनाई।

आगजनी में फसल हुई खाक

लालगंज, प्रतापगढ़। सार्टसर्किट से खेत मे लगी आकस्मिक आगजनी मे गेहूं की फसल जलकर राख हो गयी। लालगंज कोतवाली के चकौडिया निवासी रामफेर पाण्डेय के खेत में बुधवार की दोपहर बाद सार्टसर्किट से अचानक आग फैल गयी। आगजनी मे ढाई बीघा गेहूं की फसल जलकर खाक हो गयी। सूचना मिलने पर लालगंज से फायर ब्रिग्रेड की टीम पहुंची और मशक्कत कर किसी तरह आग पर नियंत्रण किया।

पिता की मौत पर बेटे ने हत्या का लगाया आरोप, दी तहरीर

लालगंज, प्रतापगढ़। सांगीपुर थाना के हुसैनपुर निवासी विंदेश्वरी वर्मा के पुत्र उमेश कुमार वर्मा ने लालगंज पुलिस को दी गई तहरीर मे कहा है कि वह दिल्ली मे कारोबारी के सिलसिले मे रहता है। बीती इक्कीस फरवरी की शाम उसके पिता विन्देश्वरी वर्मा को लालगंज कोतवाली के तिलकराम तिनमोहनिया पर घायल अवस्था मे पडे होने की जानकारी मिली। चोट अधिक लगने के कारण उसके पिता की मौत हो गयी थी। अगले दिन पीडित ने पिता का अंतिम संस्कार किया। इन बीच पीडित की मां ने उसे बताया कि बगल के ताजपुर गांव का एक आरोपी प्रायः मृतक को परेशान किया करता था। पीडित ने आरोपी को नामजद करते हुए पिता की मौत को हत्या होने की तहरीर में बात कही है। पीडित का यह भी कहना है कि पिता की हत्या की तहरीर देने के बाद आरोपी उससे पीएम रिर्पोट मांग रहा है। पीएम रिपोर्ट न देने पर आरोपी द्वारा उसे जानलेवा धमकी दी जा रही है। पीडित ने कहा है कि आरोपी व उसके कुछ साथियों द्वारा उसके पिता की हत्या कर दी गयी है। ।

बेकर्स व्यवसायी से रंगदारी मामले में व्यापारी से मिला उद्योग व्यापार मण्डल

हर संभव मदद का दिलाया भरोसा

अखंड भारत संदेश

प्रतापगढ़। उत्तर प्रदेश उद्योग व्यापार प्रतिनिधि मंडल प्रतापगढ़ जिलाध्यक्ष राजेंद्र कुमार केसरवानी व्यापार मण्डल के कई पदाधिकारियों सहित पंजाबी मार्केट के शिवकुमार पंजानी (आनंद बेकर्स वाले), जिनसे बदमाशों ने विगत दिनों मोबाइल फोन से 15 लाख रुपए रंगदारी की मांग की थी, से मुलाकात करने उनके प्रतिष्ठान पर गए।

जिलाध्यक्ष द्वारा पूछे जाने पर शिवकुमार पंजानी ने अपने साथ घटित पूरी घटना का स्पष्ट विवरण बताया और पुलिस प्रशासन के कार्य से संतुष्टि भी जताई। पीड़ित व्यवसाई शिवकुमार से सारी बातें जानने के बाद जिलाध्यक्ष राजेन्द्र कुमार केसरवानी ने उन्हें अस्वस्त करते हुए कहा कि इस संकटमयी बेला में व्यापार मंडल और व्यापारी समुदाय आपके साथ है और पुलिस प्रशासन पर भरोसा जताते हुए कहा कि हमें यकीन है कि

बेकर्स व्यापारी से मिलते व्यापार मण्डल के पदाधिकारी।

जनपद के पुलिस अधीक्षक अन्य अपराधिक घटनाओं के खुलासे की तरह, इस घटना का भी खुलासा अविलंब कर बदमाशों को पकड़ कर न्यायोचित कार्य करेंगे और साथ ही इस घटना के संदर्भ में जिलाधिकारी व पुलिस अधीक्षक महोदय से मुलाकात करने की बात कही। इसके बाद जिलाध्यक्ष ने पुलिस प्रशासन से फोन पर ही बात कर होने वाली कार्यवाही के संदर्भ में जानकारी ली। उपरोक्त मुलाकात में मुख्य रूप से जिला वरिष्ठ उपाध्यक्ष लखन बाबा, जिला महामंत्री संजय सोनी, जिला उपाध्यक्ष कृष्ण मोहन केसरवानी व सुरेश चंद्र केसरवानी एवं नारायण खंडेलवाल, राहुल केसरवानी, सुनील जायसवाल, अमित केसरवानी, सरदार वसिंदर सिंह, जगदीश मौर्य (जंबो) एवं विनोद सोनी आदि पदाधिकारीगण उपस्थित रहे।

यात्री सेवाओं की मनमानी से धूल फांक रहा लालगंज का बस अडडा

लालगंज, प्रतापगढ़। रोडवेज यात्री सेवाओ के द्वारा सवारियों को ढोने के मोह में नगर मे बने विभागीय बस अडडे का उपयोग न करने से बस अडडा धूल फांक रहा है। वहीं चैक पर रोडवेज यात्री सेवाओ के घंटो सवारियो की प्रतीक्षा मे आडे तिरछे खडे होने के कारण जाम की स्थिति भी बद से बदतर हुआ करती है। कई बार पुलिस प्रशासन ने भी चैक पर जाम को कम करने के लिए रोडवेज यात्री सेवाओ के चालको को यहां जमावडा न होने को लेकर हिदायत भी दी है। इसके बावजूद यात्री सेवाओं का ढर्रा ज्यों का त्यों बना हुआ है। क्षेत्रीय विधायक आराधना मिश्रा मोना के प्रयास से नगर मे ट्रामा सेण्टर के आगे नेशनल हाइवे पर बस अडडे का निर्माण भी काफी पहले हो चुका है। रोडवेज डिपो होने के कारण नगर से सरकारी बसों का संचालन भी अधिकाधिक हुआ करता है।

व्यापारी पुत्र के गोली से घायल होने को लेकर कई क्लू पर जांच मे जुटी खाकी

अखंड भारत संदेश

लालगंज, प्रतापगढ़। नगर की बाजार निवासी व्यापारी पुत्र के गोली लगने से घायल होने की घटना को लेकर दूसरे दिन बुधवार को भी व्यापारी के घर गम का माहौल देखा गया। वही घायल व्यापारी पुत्र का लखनऊ के मेदान्ता हॉस्पिटल में इलाज जारी है। हालांकि पुलिस के लिए जहां घटना के दूसरे दिन भी पदार्फाश न कर पाने को लेकर उसके हाथ खाली ही खाली निराशाजनक रहे तो उसे सकून यह है कि घायल व्यापारी पुत्र को खतरे से बाहर बताया जाता है। इधर घटना को लेकर दूसरे दिन भी पीडित पक्ष की ओर से पुलिस को तहरीर नही मिल सकी है। सूत्रों के मुताबिक पारिवारिकजन लखनऊ मे घायल के इलाज मे वहां मौजूद बताए गए हैं। बतादें मंगलवार की देर शाम नगर के व्यापारी श्रीकांत कौशल का पुत्र उत्कर्ष कौशल 22 बाइक से अपने ननिहाल भटनी विकास नगर की तरफ जा रहा था। विकास नगर के जेवई मार्ग पर सूनसाथ इलाके मे व्यापारी पुत्र उत्कर्ष को गोली लग गयी। गोली उत्कर्ष को बायीं तरफ पेट के किनारे गोली लगी। राहगीरों की सूचना पर स्थानीय लोग घायल को नगर के ट्रामा सेण्टर ले आये। यहां हालत गंभीर देख चिकित्सकों ने उत्कर्ष को लखनऊ रेफर कर दिया। घटना को लेकर बाजार मे भी हडकंप का माहौल बन गया। देर रात तक पुलिस की कई टीमें घटना के क्लू को खंगालने मे मशक्कत मे देखी गयी। एएसपी पश्चिमी रोहित मिश्र ने भी घटना के खुलासे को लेकर कोतवाली पुलिस को कर्रा किया। घटना को लेकर पुलिस की पेंचदी यह है कि उत्कर्ष को गोली लगने का कोई भी चश्मदीद गवाह उसे नहीं मिल पा रहा है। वहीं गोली घायल के पेट की सतह को ही चुटहिल करते निकल गयी। सवाल यह भी पुलिस को हैरान व परेशान किये है कि पेशेवर अपराधी अथवा प्रतिशोध में यदि उत्कर्ष को गोली मारी गयी तो जरायम की अब तक की नजीर के विपरीत आखिर वहां पिस्टल भी कैसे पड़ी मिली। हालांकि पुलिस अभी तक पिस्टल के मिलने की बात कबूल नही रही है। घटना को लेकर एक आपत्तिजनक तस्वीर भी वायरल होने पर भी पुलिस की निगाह घटनाचक्र में आशनाई की तरफ भी टिकी हुई बतायी जा रही है। सूत्रों के मुताबिक घटना को लेकर बुधवार को कोतवाली पुलिस बंद कमरे मे घटना के तार खंगालने को लेकर कुछ लोगों से पूछताछ मे भी मशक्कत करती रही। सीओ लालगंज रामसूरत सोनकर का कहना है कि पुलिस को अभी अस्पताल के द्वारा मेडिकल रिर्पोट की प्रतीक्षा है। मेडिकल रिर्पोट से बहुत कुछ स्पष्ट हो सकेगा कि गोली चलने का एंगिल क्या रहा होगा। सीओ ने यह भी बताया कि घटना को लेकर अभी तक कोई तहरीर पुलिस को नही मिली है। फिर भी पुलिस घटना के कई पहलुओं पर बारीकी से जांच कर रही है। इधर घटना का निष्कर्ष खाकी क्या निकालेगी इस पर बाजार में हर जुबान पर तरह तरह की चर्चा है। लोगो मे घटना को लेकर इसके कारण के खुलासे को लेकर भी कौतूहल बना हुआ है। वहीं घायल उत्कर्ष के घर मे बुधवार को भी गम का माहौल देखा गया। घटना से इतर बाजार मे अंदर ही अंदर एक आपत्तिजनक वायरल हुए पोस्ट की भी चर्चा सरगर्म बनी हुई है।

खबर संक्षेप

थाना पुलिस ने चलाया वाहन चेकिंग अभियान

कौशाम्बी। जनपद में शान्ति, सुरक्षा एवं कानून व्यवस्था को प्रभावी व सुदृढ़ बनाए रखने हेतु जनपद के समस्त थाना पुलिस बल द्वारा अपने-अपने थाना क्षेत्र में सघन वाहन चेकिंग अभियान चलाकर संदिग्ध व्यक्ति/ वाहनों को चेक किया गया पूरे जिले में चेकिंग अभियान चलाए जाने से हड़कंप मचा रहा।

पड़ोसी युवक के साथ किशोरी फरार

कौशाम्बी। कोखराज इलाके के एक गांव की किशोरी पड़ोसी गांव के एक युवक के साथ फरार हो गई। किशोरी घर से खेत की ओर जाने के बहाने निकली थी। देर रात किशोरी के घर नहीं लौटने पर परिजनों ने खोजबीन शुरू की। इसके बाद मामले की जानकारी हुई। किशोरी का पिता थाने पहुंचा और मामले की नामजद शिकायत की। पुलिस ने मुकदमा दर्ज कर लिया है।

वांछित अभियुक्त गिरफ्तार

कौशाम्बी। पश्चिम शरीरा थाना पुलिस ने वांछित अभियुक्त को गिरफ्तार किया है थाना पश्चिम शरीरा पुलिस द्वारा वांछित अभियुक्त रति लाल निवासी दानपुर को गिरफ्तार किया है और विधिक कार्यवाही के पश्चात न्यायालय भेज दिया गया।

एसपी कौशांबी की ताबड़तोड़ कार्रवाई से घबराए शूटर ने सीबीआई कोर्ट में किया आत्मसमर्पण

विधायक राजू पाल के हत्यारोपी को 18 वर्षों से खोज रही थी 2 जिलों की पुलिस, माफिया अतीक अहमद के खास शूटर अब्दुल कबि की गिरफ्तारी पर कौशाम्बी पुलिस ने घोषित किया था एक लाख रुपए का इनाम

अखंड भारत संदेश

कौशाम्बी। पुलिस कप्तान कौशांबी की ताबड़तोड़ कार्यवाही से घबराए विधायक राजू पाल का हत्यारोपी शूटर अब्दुल कवि ने सीबीआई कोर्ट में समर्पण कर दिया है प्रयागराज में 18 साल पहले हुए बसपा विधायक राजू पाल हत्याकांड में नामजद शूटर अब्दुल कवि को 2 जिले की पुलिस 18 वर्षों से खोज रही है लेकिन 18 वर्षों के बीच 2 जिलों की पुलिस राजू पाल के हत्यारोपी शूटर अब्दुल कवि की गिरफ्तारी नहीं कर सकी और दो जिले की पुलिस को चकमा देकर विधायक राजू पाल का हत्यारोपी शूटर अब्दुल कवि सीबीआई कोर्ट में हाजिर हो गया है बीते 18 वर्षों से वह फरार चल रहा था कौशांबी और प्रयागराज की पुलिस उसकी गिरफ्तारी का प्रयास कर रही थी लेकिन पुलिस को

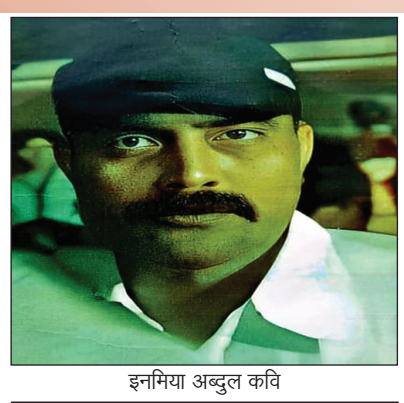

इनमिया अब्दुल कवि

सफलता नहीं मिली विधायक राजू पाल का हत्या आरोपी अब्दुल कवि की गिरफ्तारी पर पुलिस ने एक लाख रुपए का इनाम भी घोषित किया था सूत्र बताते हैं कि कौशाम्बी जिले के एक लाख के इनामी अपराधी अब्दुल कवि ने बुधवार को लखनऊ की सीबीआई कोर्ट में सरेंडर कर दिया है। अब्दुल कवि अतीक अहमद और अशरफ का काफी करीबी है, साथ ही वह बसपा विधायक राजू पाल हत्याकांड का मुख्य आरोपी भी है। अब्दुल कवि बीते 18 साल से फरार चल रहा था,जिसकी तलाश में पुलिस काफी समय से छापेमारी कर रही थी, पिछले महीने कौशाम्बी पुलिस ने अब्दुल कवि के भाई अधिवक्ता अब्दुल कादिर के घर की कुर्की की थी,जिसमे उसके घर से भारी मात्रा में अवैध असलहा और कारतूस भी बरामद किया था,जिस पर अब्दुल कवि सहित कई लोगो पर पुलिस ने मुकदमा भी दर्ज किया था,जिसके बाद पुलिस ने अब्दुल कवि के अधिवक्ता भाई अब्दुल कादिर को जेल भेज दिया था।

दबंगों ने विवाहिता को पीटा

कौशाम्बी। मंझनपुर कोतवाली क्षेत्र के रामपुर मडूकी गांव में रविवार की शाम मामूली बात पर दबंगों ने घर में घुसकर एक विवाहिता को पीट दिया है बुधवार को पीड़िता ने मामले की शिकायत अपर पुलिस अधीक्षक से की है।रामपुर मडूकी गांव की उर्मिला देवी पत्नी लवलेश कुमार ने बताया कि पड़ोसी से जमीन पर कब्जे को लेकर विवाद चल रहा है। रविवार को मवेशी बांधने के लिए खूंडा गाड़ने को लेकर दोनों के बीच कहासुनी हो गई। इसके बाद आरोपित ने मददगारों के साथ मिल घर में घुसकर तोड़फोड़ करते हुए विवाहिता को पीट दिया।ग्रामीणों के बीच-बचाव करने पर आरोपित कहीं भी शिकायत पर जान से मारने की धमकी देते हुए भाग निकले। दूसरे दिन पीड़िता शिकायत लेकर थाने पहुंची लेकिन पुलिस ने उसकी एक नहीं सुनी। बुधवार को पीड़िता ने मामले की शिकायत अपर पुलिस अधीक्षक से करते हुए न्याय की गुहार लगाई है।

साइबर अपराध की गोष्ठी को संबोधित करती थाना पुलिस

साइबर सेल व थाना पइंसा पुलिस टीम द्वारा चलाया गया साइबर जागरूकता अभियान

कौशाम्बी। साइबर जागरूकता अभियान के तहत थाना पुलिस और साइबर सेल ने जागरूकता अभियान चलाया है आम जनमानस को साइबर अपराध से बचाव के तरीके पुलिस ने बताए हैं पुलिस अधीक्षक कौशांबी के निर्देशन व अपर पुलिस अधीक्षक कौशांबी के मार्ग दर्शन में दिनांक 05 अप्रैल को विट्ठल भाई कॉलेज मोहब्बतपुर पइंसा में साइबर क्राइम जागरूकता का कार्यक्रम किया गया जिसमे साइबर क्राइम सेल व थाना मोहब्बतपुर पइंसा द्वारा विद्यालय के बच्चों व अध्यापकों को साइबर अपराध से बचाव के तरीके बताए हैं पुलिस ने बताया कि जैसे एटीएम कार्ड स्कीमिंग, यूपीआई फ्रॉड, फेसबुक फ्रॉड, कौन बनेगा करोडपति,केवाईसी फ्रॉड व अन्य विभिन्न प्रकार के साइबर अपराध से सम्बन्धित अपराध के नाम पर साइबर ठग सक्रिय है उनसे बच के रहना है उनके बातों में नहीं फंसना है साइबर अपराध से बचाव के तरीके में पुलिस ने आम जनमानस को बताया व जागरूक किया जिससे आमजनमानस साइबर फ्रॉड से बच सके। उक्त प्रशिक्षण व जागरुकता से सभी के लिये भावी भविष्य में हितकर व लाभदायक होगा।

उपस्थित लोगों को संबोधित करती विधायक पल्लवी पटेल

अखाड़ा का मैदान बना शीतला माता का मंदिर

दबंग पंडा आए दिन करते हैं मंदिर परिसर में लोगों से मारपीट

अखंड भारत संदेश

कौशाम्बी। दुनिया को धर्म और ईश्वर पर आस्था की बात बताने वाले पंडा समाज के लोग अब अराजकता की हद पार कर रहे हैं छोटी-छोटी बातों में मंदिर के कुछ पंडा लड़ाई झगड़ा मारपीट करने लगते हैं अब वह खुद धर्म और आस्था पर भरोसा नहीं कर रहे हैं सब कुछ खुद निर्णय कर लेना चाहते हैं शीतला माता की अपार शक्ति पर जब कुछ पंडा को भरोसा ही नहीं तो मंदिर की सेवा करने के लिए उन्हें मौका क्यों दिया जा रहा है इस बात को लेकर भक्तों के बीच चर्चा तेजी से हो रही है शीतला धाम मंदिर में भक्तों के साथ पंडा समाज के कुछ लोगो द्वारा मारपीट अभद्रता की जाने लगी है जिससे भक्तों के बीच आक्रोश व्याप्त है बुधवार को शीतला माता मंदिर परिसर में फिर एक महिला के साथ पंडा समाज के लोगों ने मारपीट की है महिला अपने बचाव में जान बचा कर इधर उधर भाग रही है कई पंडा एकत्रित होकर महिला को मारपीट रहे हैं आखिर शीतला माता मंदिर में कानून व्यवस्था कहां गायब हो गई है पंडा समाज के लोग कितने गुंडे हो गए हैं कि उन्हें आए दिन मारपीट करने में तनिक संकोच

शीतला माता मंदिर में महिला से मारपीट करते पंडा

नहीं लग रहा है पंडा समाज की गुंडई पर थाना पुलिस कार्रवाई करने का साहस नहीं कर पाती है उनके दिनों दिन हौसले बुलंद होते जा रहे हैं मंदिर परिसर में पंडा समाज के कुछ लोगों द्वारा मारपीट किए जाने का यह मामला बेहद शर्मनाक है और मारपीट करने वाले पंडा समाज के लोगों पर मुकदमा दर्ज करा कर उन पर कठोर कार्यवाही किए जाने की जरूरत है तभी शीतला माता मंदिर की गरिमा बरकरार रहेगी मामले की जानकारी मिलते ही मौके पर पुलिस पहुंची और बताया जाता है कि कुछ लोगों को पुलिस थाने पकड़ लाई है।

वर्षो से बंद पड़े स्कूल का विधायक ने फीता काटकर किया उद्घाटन

उपस्थित जनसमुदाय को सपा विधायक पल्लवी पटेल ने किया संबोधित

अखंड भारत संदेश

भरवारी कौशाम्बी। नगर पालिका परिषद भरवारी अंतर्गत मेहता रोड स्थित वर्षो से बन्द पड़े स्कूल का बुधवार को फीता काटकर विधायक ने उद्घाटन किया इस मौके पर प्रबंधक जय करन यादव ने फूल माला पहनाकर बुके भेट कर विधायक का स्वागत किया इस मौके पर हजारों की संख्या में लोग मौजूद रहे बता दे कि यह स्कूल बहुत पुराना है परंतु किन्ही कारणों से कुछ वर्ष के लिए बन्द हो गया था जिसको पूर्व प्रधान जयकरन यादव ने लिटिल ब्लासम इंग्लिश स्कूल को पुना चालू करने का संकल्प लिया उन्होंने गरीबों के बच्चो की शिक्षा दिलाने के लिए एक योजना बनाई। स्कूल को नया लुक देते हुए नए सिरे से लिटिल ब्लासम इंग्लिश स्कूल को संचालित किया जाएगा विद्यालय का उद्घाटन मुख्य अतिथि सिराथू विधायक पल्लवी पटेल ने किया इस अवसर पर एम एल सी मान सिंह यादव कैलाश चंद्र केसरवानी गुलाम हुसैन बिंदेशरी प्रसाद गोरे यादव देवमनी यादव अंकेश केशरवाणी नागेंद्र यादव कोचिंग संचालक धारा यादव सहित हजारो की संख्या में लोग मौजूद रहे।

अज्ञात कारणों से गेहूं के खेत मे लगी आग

कड़ी मशक्कत कर ग्रामीणों ने बुझाई खेत में लगी आग

अखंड भारत संदेश

अझुवा कौशाम्बी। सिराथू तहसील के नगर पंचायत अझुवा के किसान के खेत मे गेहूं की खड़ी फसल में अज्ञात कारणों से आग लग गयी जब तक ग्रामीण आग को बुझाते फसल जलकर खाक हो गयी। छेदी लाल पुत्र राम प्यारे निवासी वार्ड नं 6 कृष्णा नगर ,नगर पंचायत अझुवा निवासी का खेत वार्ड नं 3 शान्ति नगर की सरहद पर है बुधवार को लगभग 11 बजे उसके गेहूं की खड़ी फसल लगभग एक बीघा में अज्ञात कारणों से आग लग गयी जब विकराल धुआ उठने लगा तो खेत मे काम कर रहे लोगों की चीखने चिल्लाने से तमाम लोगों का जमघट लग गया खेत के पास ही समरसेबल लगा है उसके टैंक और नाली में भरे पानी से लोगों ने कड़ी

खेत में आग लगने के बाद मौके पर पहुंचे ग्रामीण

मशक्कत कर आग पर काबू पा लिया आग बुझा रहे लोगों ने बताया कि खेत के बगल में किसान ने खरबूजे की खेती कर रखी है जिससे आग पड़ोस के खेतों तक नही पहुंच सकी अन्यथा आग भयंकर विनाश कर सकती थी किसान मायूस होकर अपनी खड़ी फसल जलने के शोक में डूबा था खेत के ऊपर से ही विद्युत लाइन गुजरी है लोगों ने बताया कि जब खेत मे आग लगी थी उस समय विद्युत सप्लाई बंद थी।

महुआ की सूखी पत्ती जलाने से लगी गेंहू के खेत में आग

दो झोपड़ी चारपाई व अन्य सामान भी अग्निकांड में जलकर हुआ खाक

अखंड भारत संदेश

हर्रायपुर कौशाम्बी। मूरतगंज ब्लाक क्षेत्र के अंतर्गत शोभना गांव में महुआ की बाग की सूखी महुआ की पत्ती में किसी ने आग लगा दिया बाग की आग धीरे-धीरे खेत में पहुंच गयी गेहूं के खेत में आग लगने की जानकारी मिलते ही मौके पर तमाम ग्रामीण पहुंचे और कड़ी मेहनत के बाद आग पर काबू पाया देखते-देखते दो बिस्वा गेहूं की फसल जलकर खाक हो गई है। बृज किशोर उर्फ मटरू का खेत झुरिया में दिनेश पुत्र शिवदानी ग्राम पट्टी नरवर के रहने वाले लिए थे उनके खेत के बगल में महुआ की बाग में सूखी पत्ती जलाकर कुछ लोग चले गए थे बाग की पत्ती में लगाई गई आग धीरे-धीरे बढ़ती गई और गेहूं के खेत की फसल में लग गई इस अग्निकांड में गेहूं के खेत की फसल जलकर खाक हो गई बगल में बनी दो

झोपड़ी भी जलकर राख हो गयी और दो विस्सा खेत का गेहूं भी जल गया झोपड़ी में रक्खी दो चारपाई भी जलकर राख हो गई मौके पर सौ बोझ सरकंडा जल गया गांव के लोग मौके पर पहुच कर आग बुझाने लगे ग्रामीणों के काफी मशक्कत के बाद आग पर काबू पाया गया मामले की सूचना क्षेत्रीय लेखपाल को मिली तो अग्निकांड की घटना की स्थिति की जानकारी लेने क्षेत्रीय लेखपाल कुलदीप श्रीवास्तव मौके पर पहुचे और खेत में लगी आग का निरीक्षण किया है।

न्यूज झरोखा

9 अप्रैल को ओपन रैपिड शतरंज प्रतियोगिता का आयोजन

कौशाम्बी। जिला शतरंज स्पोर्ट्स एसोसिएशन कौशांबी के तत्वावधान में 2 कौशांबी ओपन रैपिड शतरंज प्रतियोगिता (बालक एवम बालिका) का आयोजन शेखर गार्डन काजीपुर चायल, जिला कौशांबी में 09 अप्रैल आयोजित होगी। इस प्रतियोगिता में जिले के किसी भी गांव और नगर के खिलाड़ी प्रतिभाग कर सकते हैं प्रतियोगिता में प्रवेश के लिए या अन्य जानकारी हेतु राघवेंद्र शुक्ला आयोजन सचिव से मोबाइल संख्या 9451293466-8808888720 पर संपर्क कर सकते हैं।

शराब के साथ दो अभियुक्त गिरफ्तार

कौशाम्बी। जनपद में अवैध शराब के निर्माण एवं तस्करी के विरूद्ध चलाये जा रहे अभियान में विभिन्न थानों द्वारा कुल दो अभियुक्तों को गिरफ्तार कर कब्जे से कुल 18 लीटर अवैध शराब बरामद की गयी गिरफ्तार सभी अभियुक्तों के विरूद्ध सम्बन्धित थानो पर अभियोग पंजीकृत कर अभियुक्तो का चालान न्यायालय कर दिया है जानकारी के मुताबिक थाना कौशाम्बी पुलिस बल द्वारा अभियुक्त सोनू पासी पुत्र बिरजू पासी निवासी कोसम ईनाम थाना कौशाम्बी को गिरफ्तार कर कब्जे से 8 लीटर अवैध शराब बरामद होने पर अभियुक्त का चालान न्यायालय कर दिया है। इसी प्रकार थाना थाना पिपरी पुलिस बल द्वारा अभियुक्त रामलौटन रैदास पुत्र स्व0 रामनाथ रैदास निवासी औधन थाना पिपरी को गिरफ्तार कर कब्जे से 10 लीटर अवैध शराब बरामद होने पर अभियुक्त का चालान न्यायालय कर दिया है।

निरोधात्मक कार्यवाही में 05 अभियुक्त गिरफ्तार

कौशाम्बी। जनपद में अपराध के विरूद्ध चलाये जा रहे अभियान के क्रम में साधारण मारपीट व शांति भंग करने के आरोप में थाना मंझनपुर से एक, थाना सराय अकिल से दो थाना कोखराज से दो कुल 05 अभियुक्तों को गिरफ्तार कर चालान न्यायालय किया गया।

घर से निकली किशोरी नहीं लौटी वापस

कौशाम्बी। कोखराज इलाके के एक किशोरी सप्ताह भर पहले संदिग्ध दशा में लापता हो गई। घूमने के लिए निकली किशोरी घर नहीं लौटी तो परिजनों ने खोजबीन शुरू की। किशोरी के पिता का आरोप है कि दूसरे दिन फोन कर किशोरी ने बताया कि वह सूरत में है। पीड़ित परिवार को आशंका है कि उसकी बेटी का अपहरण किया गया है। किशोरी के पिता की तहरीर पर गुमशुदगी दर्ज कर पुलिस ने तलाश शुरू कर दी है।

शांति भंग में 11 गिरफ्तार

कौशाम्बी जिले में कानून व्यवस्था चुस्त-दुरुस्त रखने के उद्देश्य से विभिन्न थाना पुलिस ने शांतिभंग के अंदेशे में 11 लोगों को गिरफ्तार किया है पुलिस अधीक्षक कौशाम्बी के कुशल निर्देशन में चलाए जा रहे अभियान में पश्चिम सरीरा सराय अकिल मोहब्बतपुर पाइंसा थाना पुलिस ने साधारण मारपीट व शांति भंग करने में 11 लोगो के बिरुद्ध निरोधात्मक कार्यवाही की है।

93 वाहनों पर पुलिस ने की चालान की कार्यवाही

कौशाम्बी। जिले में बुधवार को वाहन चेकिंग का बड़ा अभियान चलाया गया वाहन चेकिंग के दौरान 93 वाहनों पर थाना पुलिस ने कार्यवाही की है पुलिस अधीक्षक कौशांबी के निर्देशन में जनपद पुलिस द्वारा वाहन चेकिंग के दृष्टिगत 93 वाहन पर कार्यवाही किए जाने से सड़कों में अफरा-तफरी का माहौल मचा रहा।

सफाई कर्मी के गायब रहने से गांव में फैली गंदगी

कौशाम्बी। सिराथू ब्लॉक के शाखा गांव में नालियां जर्जर हो गई हैं। नालियों की सफाई करने सफाई कर्मी गांव नहीं पहुंच रहा है इससे लोगों के घरों का गंदा पानी रास्ते में जमा रहता है। गांव में सफाई नहीं होने के कारण गली गंदगी से पटी हुई है। स्थानीय लोगों का आरोप है कि कई बार मामले की शिकायत जिम्मेदारों से की गई लेकिन कोई सुनवाई नहीं हुई। लोगों ने गांव में नियमित सफाई की मांग की है।

देशी बम के साथ दो अभियुक्त गिरफ्तार

कौशाम्बी। जनपद में अपराध एवं अपराधियों के विरुद्ध चलाए जा रहे अभियान के क्रम में थाना पश्चिम शरीरा पुलिस बल द्वारा मस्ताचेकिंग के दौरान दो अभियुक्तों रहमान अली पुत्र सहाबुद्दी व संजय गोस्वामी पुत्र फूलचन्द्र निवासीगण पूरब शरीरा थाना पश्चिम शरीरा को पूरब शरीरा नहर पटरी के पास से 02-02 (कुल 04) अदद जिन्दा देशी बम के साथ गिरफ्तार कर गिरफ्तारी व बरामदगी के आधार पर थाना स्थानीय मुकदमा पंजीकृत कर विधिक कार्यवाही के पश्चात अभियुक्तों को न्यायालय भेज दिया है।

धमकी से परेशान कुनबा पहुंचा एएसपी के पास

अखंड भारत संदेश

कौशाम्बी। करारी थाना क्षेत्र के एक गांव का एक परिवार दुराचार के आरोपित की धमकी से सहमा है। साल भर पहले पड़ोसी गांव के युवक ने शादी का झांसा देकर दुराचार किया था। युवती ने शादी की जिद की तो आरोपित मुकर गया। पीड़ित की शिकायत पर पुलिस ने आरोपित के खिलाफ मुकदमा दर्ज कर लिया था। आरोप है कि मुकदमा दर्ज होने के बाद से आरोपित आए दिन पीड़ित परिवार को जान से मारने की धमकी दे रहा है। केस वापस करने का दबाव बना रहा है। बुधवार को मंझनपुर पहुंची पीड़िता ने मामले की शिकायत अपर पुलिस अधीक्षक से की है। एएसपी ने पीड़िता को जांच और कार्रवाई का भरोसा दिलाया है।

थाना पुलिस ने बरामद की 85 लीटर अवैध शराब

कौशाम्बी। संगठित अपराध के विरुद्ध चलाए गए पुलिस के अभियान में जनपद के विभिन्न थाना सराय अकिल मोहब्बतपुर पाइंसा संदीपन घाट की पुलिस द्वारा 85 लीटर अवैध शराब बरामद की है अवैध शराब के साथ साथ पुलिस ने 05 अभियुक्तों को गिरफ्तार किया है विधिक कार्यवाही के पश्चात शराब के साथ पकड़े गए लोगों का पुलिस ने चालान न्यायालय कर दिया है।

कप्तान साहब की लिस्ट से छूट गए ! लम्बे समय से करारी थाना में अंगद की तरह पैर जमाए सिपाही

सफेद पोश नेताओं के सहारे फल फूल रहा सिपाही, लोगों में चर्चा का विषय

अखंड भारत संदेश

कौशाम्बी। जनपद में लम्बे समय से एक ही जगह ड्यूटी दे रहे सिपाहियों के ऊपर पुलिस अधीक्षक बृजेश कुमार श्रीवास्तव ने कार्यवाही किया है उन्होंने कानून व्यवस्था को चुस्त और दुरुस्त रखने के लिए बड़े पैमाने में सिपाहियों का स्थानांतरण कर दिया है जिसमें उन्होंने तत्काल प्रभाव से 124 सिपाहियों को एक जगह से दूसरी जगह भेजा है।

वहीं जनपद के करारी थाना में सिपाही करीब साढ़े तीन साल से अंगद की तरह पैर जमाए है और क्षेत्र की जनता को आए दिन अपनी वर्दी का रौब दिखाता है , लेकिन पुलिस अधीक्षक की सूचीं से वह कैसे बच गया यह लोगों में तरह तरह की चर्चा का विषय बना हुआ है। कुछ लोग तो इसे सफेद पोश नेताओं की दरियादिली बता रहे हैं तो कुछ इसके ऊपर विभागीय कर्मचारियों के हाथ होने की बात को मान रहे हैं।फिलहाल कुछ भी हो लेकिन क्षेत्र के लोगों ने आलाधिकारियों का ध्यान इस ओर आकृष्ट कराते हुए थाना करारी में अंगद की तरह पैर जमाए इस सिपाही को दूसरी जगह स्थानांतरण करने की मांग की हैं जिससे कानून व्यवस्था चुस्त और दुरुस्त बनी रहे। अब देखना यह है कि क्या पुलिस अधीक्षक मामले को संज्ञान में लेकर कार्यवाही करते हैं या फिर वह कारखास सिपाही इसी तरह क्षेत्र के फरियादियों को परेशान करके अपनी धाक जमाता रहेगा।

लंबे समय से जमे सिपाहियों का हुआ स्थानांतरण

कौशांबी। एक ही थानों में कई साल से अंगद की तरह पैर जमाए सिपाहियों पर पुलिस अधीक्षक में कार्रवाई की है नगर निकाय चुनाव से पहले पुलिस अधीक्षक कौशाम्बी बृजेश कुमार श्रीवास्तव ने तबादला एक्सप्रेस चला कर 124 सिपाहियों को इधर से उधर कर दिया है। जिले के कानून व्यवस्था को दुरुस्त करने की दृष्टि से बडे पैमाने पर सिपाहियों का स्थानांतरण किया है पुलिस बिभाग के सूत्र बताते हैं कि 124 सिपाहियों की स्थानांतरण लिस्ट पुलिस अधीक्षक द्वारा जारी की गई है बताया जाता है कि यह सिपाही एक थाने में लंबे समय से तैनात है काफी दिनो से एक ही थाना मे जमे सिपाहियों को हटाया गया है कई महिला सिपाहियों का भी स्थानांतरण पुलिस अधीक्षक ने एक थाने से दूसरे थाने कर दिया है।

जन संपादकीय

चीन की नामकरण रणनीति

भारत के पूर्वोत्तर राज्य अरुणाचल प्रदेश के 11 स्थलों के नाम बदलने के लिए चीन के नागरिक मामलों के मंत्रालय ने मंजूरी दे दी है। इसमें दो रिहायशी इलाके हैं, पांच पर्वतों की चोटियां हैं, दो नदियां हैं और दो अन्य इलाके हैं। अरुणाचल प्रदेश के इन इलाकों के लिए चीनी, तिब्बती और पिनयिन नामों का तीसरा सेट जारी हाल ही में चीन द्वारा जारी किया था। चीन, अरुणाचल प्रदेश में 90 हजार वर्ग किलोमीटर जमीन पर अपना दावा करता है और नाम बदलने की यह चाल सीधे तौर पर भारतीय अधिकार क्षेत्र में दखलंदाजी की एक और नापाक कोशिश है। चीन के सरकारी अखबार ग्लोबल टाइम्स की एक रिपोर्ट के मुताबिक चीन की कैबिनेट की स्टेट काउंसिल के नियमों के तहत इन नामों को बदला गया है। चीन के विशेषज्ञ इसे कानूनी तौर पर सही ठहरा रहे हैं। अखबार की रिपोर्ट के मुताबिक चीन ने दक्षिण-पश्चिमी चीन के शिजांग स्वायत्त क्षेत्र में इन नामों को बदला है। चीन के अखबार में जिसे दक्षिण-पश्चिम शिजांग स्वायत्त क्षेत्र बताया गया है, वह दरअसल अरुणाचल प्रदेश है। गौरतलब है कि चीन ने 1962 में भारत के साथ युद्ध में अरुणाचल प्रदेश के आधे से भी ज्यादा हिस्से पर कब्जा कर लिया था। इसके बाद चीन ने एकतरफा युद्धविराम घोषित किया और चीन की सेना मैकमोहन रेखा के पीछे लौट गई। मैकमोहन रेखा ही भारत और तिब्बत के बीच सीमाओं का निर्धारण करती है। ब्रिटिश शासन के दौरान भारत में ब्रिटेन के प्रशासक सर हेनरी मैकमोहन और तत्कालीन तिब्बत की सरकार के प्रतिनिधि ने शिमला पर हस्ताक्षर कर इस सीमा रेखा को तय किया था। मैकमोहन रेखा को दिखाने वाला नक्शा पहली बार वर्ष 1938 में ही आधिकारिक तौर पर प्रकाशित किया गया था। लेकिन चीन-शिमला समझौते को ये कहकर खारिज करता रहा कि तिब्बत पर चीन का अधिकार है और तिब्बत की सरकार के किसी प्रतिनिधि के हस्ताक्षर वाले समझौते को वो स्वीकार नहीं करेगा। चीन अरुणाचल प्रदेश को भी दक्षिणी तिब्बत का इलाका बताता आया है और तिब्बती धर्मगुरु दलाई लामा से लेकर भारतीय प्रधानमंत्रियों के अरुणाचल दौरे पर आपत्ति जताता रहा है। भारत के इस पूर्वोत्तर राज्य पर अब नाम बदलने कर हक दिखाने की कोशिश चीन ने की है। अपने इस पड़ोसी राज्य की हरकत पर भारत के विदेश मंत्रालय ने प्रतिक्रिया दी है कि हमने ऐसी रिपोर्टें देखी हैं। ये पहली बार नहीं है जब चीन ने इस तरह का प्रयास किया है। हम इसे सिरे से खारिज करते हैं। अरुणाचल प्रदेश हमेशा से भारत का हिस्सा है और हमेशा भारत का अभिन्न अंग बना रहेगा। नए नाम रखने के प्रयासों से ये सच्चाई नहीं बदलेगी। किसी भी स्वायत्त, सम्प्रभु राज्य की सीमा में अगर कोई अतिक्रमण करे या उसके स्थलों के नाम बदले तो यही स्वाभाविक प्रतिक्रिया होनी चाहिए, जो भारत ने प्रकट की। सवाल ये है कि यही प्रतिक्रिया भारत कितने बार और कब तक देने का इरादा रखता है। दरअसल चीन ने पहली बार साल 2017 में छह जगहों के और फिर 2021 में 21 जगहों के नामों को अपने हिसाब से बदला था। तब भी भारत के विदेश मंत्रालय ने इसी तरह की प्रतिक्रिया दी थी कि अरुणाचल प्रदेश भारत का अभिन्न अंग है और रहेगा। ऐसे जवाब के बाद भी चीन अगर छह साल में तीन बार नाम बदलने की कोशिश करे, तो इसका अर्थ यही है कि या तो वह भारत के जवाब को सुन नहीं रहा है, या सुनने के बावजूद उसे मान नहीं रहा है। नाम बदलने के अलावा भारतीय इलाकों में घुसपैठ की कोशिश भी चीन करता रहा है, गलवान के जख्म इसके गवाह हैं। चीन की इस अतिक्रमणकारी नीति और विस्तारवादी एजेंडे से भारत को सख्ती से निपटना होगा। लेकिन इसकी शुरूआत तभी होगी, जब सरकार इस तथ्य को स्वीकार करेगी कि चीन हमारी सीमाओं में घुसपैठ कर रहा है। अभी तो सरकार इसे नकारने की मुद्रा में ही दिखती है। प्रधानमंत्री ने अब तक चीन का नाम लेकर आलोचना नहीं की। इंडोनेशिया में शिष्टाचार के नाते अगर प्रधानमंत्री मोदी खुद उठकर चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग से हाथ मिलाने पहुंच गए, तब भी उन्हें ये सख्त संदेश देना चाहिए था कि शिष्टाचार और नैतिकता का अर्थ हमारी कमजोरी न समझा जाए। गलवान के बाद कई सैटेलाइट तस्वीरें सामने आई हैं, जिनमें बताया जाता है कि अरुणाचल प्रदेश के नजदीक चीन पूरी बसाहट का इंतजाम कर रहा है। इन खबरों में क्या सही है, क्या गलत, इसका खुलासा तो तभी होगा जब सरकार कोई स्पष्ट बयान जारी करेगी। लेकिन सरकार सुरक्षा का हवाला देते हुए चीन के मसले पर बात ही नहीं करती। और विपक्ष सवाल उठाए, तो जवाब देना जरूरी नहीं समझती। मीडिया में पाकिस्तान को देश के बड़े दुश्मन की तरह पेश किया जाता है, उसकी खस्ता आर्थिक हालात पर तंज कसे जाते हैं। जबकि आज के हालात में चीन से सबसे अधिक चुनौती भारत को मिल रही है। जब गलवान में भारतीय-चीनी सैनिकों के बीच हिंसक झड़प हुई थी, तो भारत ने सख्ती दिखाने के नाम पर चीन के कुछ ऐप्स प्रतिबंधित कर दिए थे और व्यापार पर रोक लगाने की बात की थी। हालांकि व्यापार का सिलसिला कई तरह से चलता रहा, केवल आम जनता के लिए चीनी सामान का बहिष्कार राष्ट्रवाद के नए मंत्र के रूप में पेश किया गया था। अभी कुछ वक्त पहले विदेश मंत्री एस.जयशंकर ने सामान्य बुद्धि का हवाला देते हुए कहा था कि चीन हमसे बड़ी अर्थव्यवस्था है, तो हम उससे कैसे लड़ सकते हैं। इस जवाब से जाहिर हो रहा है कि भारत सरकार चीन को उसकी सीमाओं में रहने की नसीहत देने की जगह अपनी सीमाओं को समझने में लगी है। इसलिए चीन की हिम्मत बढ़ती जा रही है। इससे पहले की पानी सिर के ऊपर से गुजरे सरकार को सख्त कदम उठाने ही होंगे।

आंकड़ों का सच-झूठ: जनता कैसे करें भरोसा

अरविन्द मोहन

70 फीसदी से ज्यादा घरों के चूल्हे के लिए लकड़ी, उपले या खेती से निकले डंठल या भूसे पर ही निर्भर हैं। झारखंड के 25 फीसदी से भी कम घरों का चूल्हा एलपीजी से जलता है जो देश में सबसे कम है। इसी सर्वेक्षण में यह भी उजागर हुआ कि 15 से 24 साल के 16 फीसदी पुरुष और 44 फीसदी महिलाएं न तो स्कूल-कॉलेज जाते हैं न काम करते न ही कहीं प्रशिक्षण ले रहे हैं। आंकड़े सरकारी हैं इसलिए बात भरोसे से की जा सकती है। लेकिन इन आंकड़ों की चर्चा मीडिया में इतनी कम क्यों हुई? यह हैरान करता है। बात ग्रामीण और शहरी भारत में शुद्ध पेय जल पहुंचाने और घर-घर शौचालय वाले स्वच्छता मिशन की उपलब्धियों और नाकामियों की है। और आंकड़े राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के है। सर्वेक्षण के 78वें दौर के मल्टीपल इंडीकेटर सर्वे के अनुसार आज भी ग्रामीण भारत के चार में से तीन घरों तक स्वच्छ पेयजल की पाइप वाली व्यवस्था नहीं है।

शहरी इलाकों की स्थिति अच्छी है लेकिन यहां भी एक तिहाई घर अभी इस सुविधा से वंचित हैं। करीब 21 फीसदी घरों तक अभी भी शौचालय की सुविधा नहीं है। बहुत बड़े आधार वाले इस सर्वेक्षण से यह भी जाहिर हुआ कि अभी भी देहाती आबादी का आधा हिस्सा अभी भी जलावन की लकड़ी से ही खाना बना रहा है। और अगर कोई चाहे तो यह भी कह सकता है कि उज्ज्वला योजना ने देश की आधी से अधिक महिलाओं को चूल्हा फूंकने से मुक्ति दिला दी है और शौचालयों की दखल अस्सी फीसदी से कुछ कम घरों तक हो चुकी है। इस मामले में सबसे खराब स्थिति झारखंड और ओडिशा की है। लेकिन नरेंद्र मोदी के शासन के नौ वर्षों के साथ यदि हम यूपीए शासन के दस साल और उसके लोकप्रिय और कार्यकुशल मंत्री रघुवंश प्रसाद सिंह की तत्परता और मेहनत को देखें तो लगेगा कि अभी जो स्थिति होनी चाहिए थी वह कोसों दूर है। जाहिर है इस काम में जो संसाधन लगाना चाहिए और जो रणनीति अपनाई जानी चाहिए वह अभी भी दूर है। और शायद हम इन बातों के महत्व को अपने लोगों के मन में बैठाने में भी असफल रहे हैं। स्वच्छता मिशन का प्रचार बहुत हुआ है लेकिन उतना असर नहीं दिखता। इसकी तुलना में बैंक में खाता खोलने, मोबाइल पहुंचाने, बिजली पहुंचाने या सड़क मार्ग से देश के हर गांव को जोड़ने के मामले में शायद बेहतर उपलब्धियां हासिल हुई हैं। और पेयजल मिशन या स्वच्छता का काम अकेले इन्हीं दो सरकारों का भी नहीं है। इनका हिसाब तो बीस साल का भी नहीं है। आजाद देश का हिसाब तो पचहत्तर साल का है और अंगरेजी हुकूमत ने भी ये व्यवस्थाएं की थीं- खासकर शहरी क्षेत्रों के लिए। हम लाख दावे करें पर अभी भी अधिकांश शहरों के पेयजल और मल-निकासी की पुरानी व्यवस्थाएं ही आगे के लिए भी आधार बनी हैं। कई जगह तो मुगल दौर की या उस काल की व्यवस्थाएं आज भी काम कर रही हैं। मजे की बात यह है कि हमारे राष्ट्रपिता की प्राथमिकता में यह चीज चंपारण आंदोलन के समय से ही दिखने लगी थी। तब भी चंपारण के कुएं, तालाबों की सफाई और उनमें पोटेशियम परमैगनेट के घोल से सफाई का कार्यक्रम जोर-शोर से चला था। तब के चंपारण में घेंघा, मलेरिया और चर्मरोग इतना ज्यादा था कि गांधी ने इस काम को तीनकठिया से मुक्ति के बाद प्राथमिकता के आधार पर किया। खास इसी के लिए डॉ. देव को बुलाया गया और महाराष्ट्र तथा कर्नाटक से स्वयंसेवक बुलाए गए थे। इतना ही नहीं, हमारे एक और बड़े जननेता डॉ. राममनोहर लोहिया तो घर में शौचालय होना और औरतों को चूल्हा फूंकने से मुक्ति दिलाए बगैर औरत की आजादी की बात करना भी गुनाह मानते थे। बहुत बाद तक समाजवादी आंदोलन के लोग बाकी समाज में काम अपने कार्यकताओं के घर में शौचालय ढूंढते थे और न होने पर डांट लगाते थे। रघुवंश बाबू के समय लोहिया की इस सूक्ति की चर्चा बार-बार होती थी। और गांधी तो स्वच्छता मिशन का प्रतीक चिह्न ही बन गए हैं। आजकल भले इस प्रचार में कुछ कमी दिखती है वरना गांधी का चेहरा, चश्मा और खड़ाऊ ही मिशन का प्रतीक थे।

शहरी इलाकों की स्थिति अच्छी है लेकिन यहां भी एक तिहाई घर अभी इस सुविधा से वंचित हैं। करीब 21 फीसदी घरों तक अभी भी शौचालय की सुविधा नहीं है। बहुत बड़े आधार वाले इस सर्वेक्षण से यह भी जाहिर हुआ कि अभी भी देहाती आबादी का आधा हिस्सा अभी भी जलावन की लकड़ी से ही खाना बना रहा है। और अगर कोई चाहे तो यह भी कह सकता है कि उज्ज्वला योजना ने देश की आधी से अधिक महिलाओं को चूल्हा फूंकने से मुक्ति दिला दी है और शौचालयों की दखल अस्सी फीसदी से कुछ कम घरों तक हो चुकी है

उस हिसाब से देखें तो अभी इस मामले में काफी काम बाकी है बल्कि अनेक राज्यों में पाइप और नल वाले पानी का हिसाब तो इस सर्वेक्षण में नगण्य बताया गया है। सर्वे में घर या आंगन या फिर सार्वजनिक नल तक पाइप के सहारे पानी पहुंचने, नल-कूप से पानी, चापाकल/हैंडपंप, ढंके या छत वाले कुएं, टैंकर, बोतल या जार में बंद पानी की आपूर्ति को भी गिना गया और इस हिसाब से 95 फीसदी से ज्यादा लोग पेयजल प्राप्त कर रहे थे। बिहार में हाल के दिनों में पाइप वाले पेयजल का काफी काम हुआ है लेकिन वह इस दौर वाले सर्वे में नहीं आ पाया। पर असम, झारखंड, उत्तर प्रदेश और ओडिशा पेय जल की उपलब्धता के मामले में राष्ट्रीय औसत से काफी नीचे हैं। कई जगह तो साफ पानी की उपलब्धता कराने में नब्बे फीसदी घरों तक नहीं हो पाई है। इसी तरह घर के अंदर शौचालय बनवाने के मामले में बिहार, झारखंड और ओडिशा सबसे नीचे हैं। यहां बिना शौचालय वाले ग्रामीण घरों का अनुपात तीस फीसदी से ज्यादा है। अब कई राज्यों में यह अनुपात साठ फीसदी से ऊपर भी गया है। अभी भी छत्तीसगढ़, ओडिशा, पश्चिम बंगाल, नागालैंड और मध्यप्रदेश के 70 फीसदी से ज्यादा घरों के चूल्हे के लिए लकड़ी, उपले या खेती से निकले डंठल या भूसे पर ही निर्भर हैं। झारखंड के 25 फीसदी से भी कम घरों का चूल्हा एलपीजी से जलता है जो देश में सबसे कम है। इसी सर्वेक्षण में यह भी उजागर हुआ कि 15 से 24 साल के 16 फीसदी पुरुष और 44 फीसदी महिलाएं न तो स्कूल-कॉलेज जाते हैं न काम करते न ही कहीं प्रशिक्षण ले रहे हैं। पुरुषों के मामले में उत्तराखंड, ओडिशा, केरल और दिल्ली का दर्जा काफी नीचे था जबकि औरतों के मामले में उत्तरप्रदेश, असम, ओडिशा, गुजरात, पश्चिम बंगाल और बिहार का नंबर नीचे था। मोबाइल फोन के मामले में लगभग आधी आबादी की पहुंच हो चुकी है और बैंकों में खाते के मामले में सफलता की दर लगभग नब्बे फीसदी तक पहुंच गई थी। अब यह सर्वे के दायरे के बाहर का सवाल है कि उनमें कितना पैसा था और कितने खाते सिर्फ सरकारी योजनाओं के रकम के डायरेक्ट ट्रांसफर के लिए खुले थे।

सुपारी का लेन-देन और कब्र की खुदाई ही है

डॉ. दीपक पाचपोर

दरअसल ये लोग ही भाजपा की असली परिसम्पत्ति हैं। ये वे हैं जिनके लिये रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य, सड़कें, बिजली, पानी व अन्य बुनियादी सुविधाएं कोई मायने नहीं रखतीं। ये ही वे लोग हैं जो नागरिक चेतना, अधिकारों व विवेक से शून्य हैं। वे हर कीमत पर साम्प्रदायिक अलगाव व सामाजिक भेदभाव को बनाये रखने के पक्षधर हैं- सरकार के अपकर्मों की अनदेखी करते हुए और अपने बच्चों का भविष्य स्वाहा करके भी। अपनी असफलताओं के अलावा हिंडनबर्ग की रिपोर्ट और राहुल गांधी द्वारा अडानी से उनके सम्बन्धों को लेकर हुए हमले के कारण पहले से बौखलाये बैठे मोदी के समक्ष अगले माह के मध्य में होने जा रहे कर्नाटक विधानसभा में हार का साफ व बड़ा खतरा मंडरा रहा है

आखिर मोदी जैसे व्यक्ति को, जो चमत्कारिक गति से देश का विकास करने का दावा करते हुए सारी समस्याओं को किसी जादू की छड़ी से गायब करने के तरीके बतलाया करते थे; और देश को अभूतपूर्व ऊंचाइयों तक ले जाने की बातें करते थे, आज अपनी एक भी उपलब्धि क्यों नहीं गिना पा रहे हैं? आखिर क्यों आज भी वे पिछली सरकारों को कोसते फिरते हैं? देश को पूरी तरह से बदलने का दावा कर केन्द्र की सत्ता में आए प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी का कार्यकाल 9 वर्षों के दौरान इसी मुकाम तक पहुंच पाया है कि आज भी वे जनसरोकार के ठोस मुद्दों एवं अपने कामों की रिपोर्ट पेश करने की बजाय भावनात्मक मसलों पर ही बातें करते हुए अपने आप को निरीह, गरीब व प्रताड़ित बतलाते रहे हैं। विक्टिम कार्ड खेलने की प्रक्रिया में वे पूरे देश को भी बेबस व बेचारा साबित करने पर आमादा हैं। बेशक, हर कोई जानता है कि यह उनकी चुनावी रणनीति का हिस्सा है लेकिन वे इसकी आड़ में महत्वहीन विमर्श को ऐसा मजबूती से पेश कर रहे हैं कि सत्ता पाने की गारंटी बनी रहे। दुखद तो यह है कि वे जब भावनात्मक मुद्दों पर आधारित आसमानी आदर्श गढ़ते हैं तो उसे अतिरिक्त बल देने के लिये सामाजिक विभाजन का ही सहारा लेते हैं जो देश एवं लोकतंत्र के लिये बहुत नुकसानदेह साबित हो रहा है। रामनवमी में जिस प्रकार से साम्प्रदायिक वैमनस्यता का अतिरिक्त ज्वार देखा गया है, वह यही बता रहा है कि आने वाले सभी चुनावों में भाजपा का एजेंडा यही रहेगा। लोकहित पीछे, बहुत पीछे छूटते जा रहे हैं। नुकसान जनसामान्य को होगा, लाभान्वित होगा राजनीतिज्ञों व पूंजीपतियों का गठजोड़। सवाल तो यह है कि क्या मोदी प्रणीत सरकार के 9 साल के कथित महान कामों का हासिल इतना ही है कि भारत का लोकतंत्र 2024 के आम चुनावों की दहलीज पर खड़ा होकर भी सुपारी के लेन-देन और कब्र खोदने से आगे नहीं बढ़ेगा?

अगर विचार करें कि आखिर मोदी जैसे व्यक्ति को, जो चमत्कारिक गति से देश का विकास करने का दावा करते हुए सारी समस्याओं को किसी जादू की छड़ी से गायब करने के तरीके बतलाया करते थे; और देश को अभूतपूर्व ऊंचाइयों तक ले जाने की बातें करते थे, आज अपनी एक भी उपलब्धि क्यों नहीं गिना पा रहे हैं? आखिर क्यों आज भी वे पिछली सरकारों को कोसते फिरते हैं? उन्हें अवाम ने दो-दो बार बड़े मौके दिये हैं। फिर भी उन्हें ठोस मुद्दों पर बात करने की बजाय परिवारवाद का ढोल क्यों पीटना पड़ रहा है? क्यों वे देश की मूलभूत समस्याओं का निराकरण करने की जगह पर खुद को चमकाने में सारा वक्त जाया कर रहे हैं?

गहराई में जाएं तो यही बात निकलकर सामने आती है कि जिस छवि के बल पर उन्होंने सत्ता पाई है, दरअसल उसका कचूमर निकल गया है। एक-एक कर बात कर ली जाए। जिस समय मोदी की प्रधानमंत्री के लिये दावेदारी पेश की गई, तो कहा गया कि देश की सारी समस्याओं के समाधान विकास के गुजरात मॉडल में उपलब्ध हैं जिसके निमार्ता यही व्यक्ति है। समय के साथ पाया गया कि वह कथित मॉडल पूंजी की तरफ ऐसा बेढंगा झुका हुआ है कि जब कोई विदेशी मेहमान आता है तो उस मॉडल के तहत हुए विकास से प्रभावित एक बड़े हिस्से को अस्थायी दीवार खड़ी कर ढांकना पड़ता है। उस मॉडल के अनुरूप बनने वाली देशव्यापी सारी योजनाएं एक-एक कर नाकाम होती जाती हैं- पहली से बढ़कर दूसरी और उससे बढ़कर तीसरी सुपर फ्लॉप! उसी मॉडल के नाम पर देश की गरीब जनता अपनी मेहनत का एक-एक रुपया सरकार पर भरोसा कर जन धन योजना के तहत खुले सरकारी खातों में डालती है और एक सुबह यह मनहूस खबर आती है कि उनके सारे पैसे कर्ज के रूप में लेकर उसी धरती के (गुजरात) फ्रॉडिये विदेश जाकर बस जाते हैं। इसी मॉडल के तहत नोटबंदी कर जनता का सारा पैसा लूटकर अपने संगठन के कार्यालय बनाये जाते हैं और चुनाव लड़े जाते हैं, रैलियां व रोड शो होते हैं। इस मॉडल ने बताया कि हमारे पास इतने पैसे हैं कि कई-कई लाख-करोड़ों का कर्ज हम उद्योगपतियों व कारोबारियों को न लौटाने के लिये तो दे सकते हैं परन्तु हमारे पास न तो कोरोना से मरते लोगों को ऑक्सीजन देने के लायक पैसे हैं और न ही उनके गरिमामय अंतिम संस्कार करने के लिये धन है। यही मॉडल सरकार को इस बात के लिये भी प्रेरित करता है कि संसद में बहस किये बगैर ऐसा कानून लाया जाये जिसके द्वारा देश भर के सारे किसानों द्वारा उत्पन्न अनाज अपने चुनिंदा व चहेते सेठों के गोदामों में डालने का विधिसम्मत प्रबंध कर दिया जाये; और जब वे विरोध करें तो उन्हें 13 माह तक दिल्ली की सीमाओं पर ठंड-बारिश-गर्मी में मरने के लिये छोड़ दिया जाये। इतना ही नहीं, सत्ता के नशे में बौराया हुआ कोई मंत्री-पुत्र इन किसानों को कुचलने का दुस्साहस भी करता है। इस मॉडल में पिछले 9 वर्षों से जारी मोदी के निजाम का योगदान ऐसा है कि उसमें जनता से मुक्त व स्वस्थ संवाद के सारे रास्ते बन्द हैं, सवाल पूछने की बात तो सोची ही नहीं जा सकती। मोदी न तो संसद में प्रस्तुत सवालों पर बोलते हैं और न ही प्रेस कांफ्रेंस करते हैं। सूचना के अधिकार को इतना कमजोर कर दिया गया है कि जनता को जो जानना चाहिए, वह पूरी तरह से उसकी पहुंच से दूर कर दिया जाता है। यही मॉडल लोक गायकों से लेकर कॉमेडियनों तथा पत्रकारों के खिलाफ झूठे मुकदमे दायर कराता है तथा मानवाधिकार कार्यकताओं को बरसों बरस जेलों में सड़ा देता है। इसके बावजूद जब इस मॉडल की पोल का कोई गम्भीर खुलासा विदेश की धरती से होता है तो सरकार बता देती है कि मोदी के मित्रों का नाम लेना मना है। इसके बारे में न तो देश का सबसे महान व्यक्ति कुछ कहता है और न ही सरकार कोई सवालों के सीधे बयान देती है। अगर कोई पूछने का साहस करता भी है तो उसे मानहानि के नाम पर जेल में डालने की साजिशें रची जाती हैं। तो यही कारण है कि मोदी अपनी सरकार की उपलब्धियों पर बात करने की बजाय परिवारवाद, पिछली सरकारों की गलतियां, देश विभाजन, तुष्टिकरण की बातें करते हैं, विपक्षियों द्वारा उन्हें गालियां देने, उनकी कब्र खोदने या फिर उन्हें सुपारी देने का रोना रोते हैं। प्रश्न तो यह भी है कि जब अधिसंख्य जनता को यह साफ दिख रहा है कि मोदी व उनकी सरकार इतना लम्बे समय में डिलीवर करने में नाकाम रही है व उपलब्धियों के नाम पर शून्य है तो आखिर कौन हैं जो अब भी उनके समर्थक बने हुए हैं? दरअसल ये लोग ही भाजपा की असली परिसम्पत्ति हैं। ये वे हैं जिनके लिये रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य, सड़कें, बिजली, पानी व अन्य बुनियादी सुविधाएं कोई मायने नहीं रखतीं। ये ही वे लोग हैं जो नागरिक चेतना, अधिकारों व विवेक से शून्य हैं। वे हर कीमत पर साम्प्रदायिक अलगाव व सामाजिक भेदभाव को बनाये रखने के पक्षधर हैं- सरकार के अपकर्मों की अनदेखी करते हुए और अपने बच्चों का भविष्य स्वाहा करके भी। अपनी असफलताओं के अलावा हिंडनबर्ग की रिपोर्ट और राहुल गांधी द्वारा अडानी से उनके सम्बन्धों को लेकर हुए हमले के कारण पहले से बौखलाये बैठे मोदी के समक्ष अगले माह के मध्य में होने जा रहे कर्नाटक विधानसभा में हार का साफ व बड़ा खतरा मंडरा रहा है। माना जा रहा है कि इस राज्य को हारने के बाद मोदी व भाजपा के लिये सतत तीसरी बार लोकसभा (2024 का) का चुनाव जीतना कठिन हो जायेगा। इसलिये मोदी मूलभूत मुद्दों के बारे में एक भी शब्द कहे बगैर उनके लिये सुपारी लेने-देने, उनकी कब्र खोदने जैसी बेतुकी व आधारहीन बातें कर रहे हैं। यह न देश के हित में और न ही लोकतंत्र के हित में है क्योंकि इस विमर्श को बढ़ाने के लिये भाजपा को सामाजिक टकराव को बनाये रखना भी आवश्यक है।

सब कुछ देख रही दुनिया

सुशील कुट्टी

भारत की जी-20 की अध्यक्षता मोदी के लिए इस बात को और महत्वपूर्ण बना देता है कि वह राजनीतिक विरोधियों के बारे में वैसे बातें बोलना बंद करें मानो वे दीमक और दुश्मन हों जिनसे मौत तक लड़ाई लड़ी जानी चाहिए। भारत का चुनावी लोकतंत्र भाजपा और कांग्रेस दोनों को एक साथ संभालने के लिए काफी बड़ा और जीवंत है और अभी भी भारतीय जनता पार्टी के आकार के कुछ और राजनीतिक दलों के लिए जगह है। संयुक्त राज्य अमेरिका के डूबकी मारने के बाद, जर्मनी की बारी थी। राहुल गांधी की अयोग्य सांसद की हैसियत वाली स्थिति दोनों लोकतंत्रों को परेशान कर रही है। राहुल गांधी की लंदन टिप्पणी जो नहीं कर सकी, वह लोकसभा से उन्हें अयोग्य ठहराने ने कर दी। दोनों देशों को उठकर प्रतिक्रिया करने के लिए मजबूर कर दिया। राहुल गांधी को यह भी साबित करने की जरूरत न रही कि न तो अमेरिका और न ही यूरोपीय संघ भारत में लोकतंत्र की मौत से बेखबर थे। सिक्का गिरा और संयुक्त राज्य अमेरिका और जर्मनी दोनों ने इसके ठनकने की आवाज को जोर से और स्पष्ट रूप से सुना। कांग्रेस सांसद दिग्विजय सिंह ने जर्मन विदेश मंत्रालय के प्रति आभार व्यक्त करते हुए ट्वीट किया और जिसने भाजपा की जोरदार नाराजगी अर्जित की, वह भाजपा जो नहीं जानती कि गांधी परिवार के किसी व्यक्ति को निशाना बनाने पर कांग्रेस का क्या होता है। यह इंदिरा गांधी और यहां तक कि राजीव गांधी के साथ भी हुआ। लेकिन सोनिया गांधी और राहुल गांधी को लक्षित हमलों का खामियाजा भुगतना पड़ा, खासकर 2014 में नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में भाजपा द्वारा भारत की सत्ता हासिल करने के बाद, जो अब लगभग एक दशक तक भारत के प्रधानमंत्री रहने का गौरव प्राप्त कर रहे हैं। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भारत के चेहरे से वंशवादी शासन को उखाड़ फेंकने को अपने जीवन की महत्वाकांक्षा बना लिया है; खासकर गांधी परिवार के वंश के शासन को उखाड़ फेंकने का। यह अनुमान लगाना कठिन है कि नरेंद्र मोदी दोनों में से किससे अधिक छुटकारा पाना चाहते हैं, दोनों में से कौन मोदी की प्रमुख डार्क म्यूज है? 137 साल पुरानी भव्य पार्टी की मौत, या गांधी परिवार के शासन का अंत? न केवल भारतीय बल्कि दुनिया ने मोदी के कांग्रेस मुक्त भारत के पोषित सपने के बारे में सुना है, जिसे अब मोदी भी महसूस करना शुरू कर रहे हैं कि कहना जितना आसान लगता था उसे होते देखना उतना आसान नहीं है। अभी, 2023 में कई विधानसभा चुनावों के साथ और 2024 के आम चुनाव राजनीतिक क्षितिज पर काले बादल की तरह मंडरा रहे हैं, और मोदी का कांग्रेस-मुक्त भारत का सपना और भी पीछे धकेल दिया गया है। इसके साथ ही गांधी परिवार के पीछे हटने की भी कोई संभावना नहीं दिखती है। इसके अलावा, राहुल गांधी के नेतृत्व में गांधी परिवार को मोदी शासन के खिलाफ विपक्ष के संघर्ष की अग्रिम पंक्ति में पहुंचा हुआ देखा जा रहा है। मोदी सरकार की अपेक्षा के विपरीत, विश्व शक्तियां मोदी को यूं ही जाने देने वाली नहीं हैं क्योंकि वह तो अगली महान वैश्विक आर्थिक शक्ति के वर्तमान प्रधानमंत्री हैं। भारत अगली महान उभरती हुई वैश्विक आर्थिक शक्ति बना रहेगा, चाहे भारत का प्रधानमंत्री कोई भी हो, नरेंद्र मोदी या राहुल गांधी; या, उस मामले के लिए, संसद में बहुमत वाला कोई भी अ ब स, बशर्ते वह व्यक्ति अयोग्य न हो। जो भी हो, अमेरिका और जर्मनी की प्रतिक्रिया,जहां एक ओर अनावश्यक और निश्चित रूप से संदर्भ से बाहर थी, जिसके लिए उन्हें भारत के विदेश मंत्रालय द्वारा उचित तरीके से फटकार लगाई जानी चाहिए, दबंग मोदी सरकार के लिए यह वेकअप कॉल है। मोदी सरकार, यदि वह विदेशी आलोचना के प्रति संवेदनशील हैं, तो उन्हें ध्यान रखना चाहिए कि वह भारतीय नागरिकों और भारत की संस्थाओं के प्रति अपने व्यवहार और रवैये में असंवेदनशील न दिखे। भारत की जी-20 की अध्यक्षता मोदी के लिए इस बात को और महत्वपूर्ण बना देता है।

हारने वाले को झुनझुना मुबारक

डॉ. सुरेश कुमार

वे एक सफल नेता थे। गिरगिट रंग बदलने के लिए, सियार चालाकी के लिए, चोर-उचक्के लूट-पाट करने के लिए इन्हीं के पास प्रशिक्षण लेने के लिए आते थे। जुबान से पलटना, कही बात से पीछे हटना, पार्टी सिद्धांत से खुद को बड़ा समझना उनके रग-रग में बसा था। वे कपड़े बदलें न बदलें पार्टी जरूर बदलते थे। ऐसा करने से उनकी नेतागिरी की धाक बनी रहती थी। सबकी अपनी-अपनी जरूरतें होती हैं। सबके अपने-अपने पेट और मुँह होते हैं। फिर नेता जी की जरूरतों का मुँह कुछ ज्यादा ही बड़ा था। न ये कभी भरा था, न भरा है और न कभी भरेगा। ओलंपिक्स में लांग जंप करने वाला खिलाड़ी हार जाए तो खाली हाथ लौटता है जबकि ये महाशय दाएँ-बाएँ, ऊपर-नीचे हर दिशा में जंप करके कुछ न कुछ हथिया ही लेते थे। वह भी न मिले तो बाजू वाले का ही सही हड़पने की काबिलियत तो रखते ही थे। जिस तरह खुली हवा में टहलने से स्वास्थ्य बना रहता है उसी तरह पार्टी बदलते रहने से उनकी रौनक बनी रहती थी। यही वजह थी कि पिछले चार साल में चार सौ से अधिक बड़े नेताओं ने पार्टियों की ऐसी अदला-बदली की जैसे गंगा जी का मेला हो। नारा भी गजब झ अबकी बार - जंप लगा यार! डंडा वही पर झंडा अलग की तर्ज पर नेता वही पर टोपी अलग की रेस में नेताजी ने चोरी-चोरी, चुपके-चुपके पार्टी बदल ली। और पार्टी भी वही जिसे वे बरसों से गरियाते रहे। गरिया-गरियाकर उनका मुँह गरियाने का शोधालय बन गया। अब ऐसे शोधालय से गरियाने की खरी न निकलेगी तो मीठी-मीठी फुलझड़ी झड़ेगी? पार्टी बदलने के बाद मीडिया का सामना करना कोई इनसे सीखे। यह पूछने पर कि आपने पार्टी क्यों बदली तो जनता, निर्वाचन क्षेत्र और देश के विकास के खातिर जैसा कर्णप्रिय वनलाइनर कहकर सबके मुँह पर ताला लगा देते। जबकि इस वनलाइनर का गूढार्थ रहिमन पानी राखिए वाले पानी से भी भारी था। अब भला कोई नेता जी को कौन बताए कि विकास नाम का जीव अंग्रेजों के जमाने से ही गायब है। आजादी के बाद सीबीआई, आईबी, रॉ, ईडी सभी को इसी के पीछे लगा दिया। सबने अपने हाथ खड़े कर दिए। आज तक उसकी खोज जारी है। कभी-कभार विकास नाम का प्राणी पुलिस वालों के हत्थे चढ़ भी जाता तो बदकिस्मती से मुठभेड़ में ढेर कर दिया जाता।

मानवता के विपरीत कार्य कर रही भाजपा: अनुज

महर्षि कश्यप की सपा ने मनाई जयंती

अखंड भारत संदेश

चित्रकूट। समाजवादी पार्टी जिला कार्यालय में महर्षि कश्यप एवं श्रृंगवेरपुर के राजा निषादराज की जयंती पर उनके चित्र पर माल्यार्पण कर धूमधाम से जयंती मनाई गई। जिलाध्यक्ष अनुज सिंह यादव ने महर्षि कश्यप एवं निषादराज के गौरवमयी इतिहास बताते हुए कहा कि समाज में मानवता के कार्य किये हैं।

बुधवार को जिला कार्यालय में जयंती समारोह में सपा जिलाध्यक्ष अनुज सिंह यादव ने कहा कि ऋषियों-मुनियों में श्रेष्ठ महर्षि कश्यप महान तपस्वी एवं सभी प्राणियों के लिए समय-समय पर यज्ञ करके मानव जीवन को सरल एवं दीघार्यु बनाते रहे हैं। इन्हीं के कुल में जन्मे इनके पौत्र श्रेष्ठ ऋषि श्रृंगी ने राजा दशरथ को पुत्र प्राप्ति का मनोकामना यज्ञ कराया। इसके प्रभाव से प्रभु राम समेत राजा दशरथ को चार पुत्र रत्नों की प्राप्ति हुई।

उन्होंने कहा कि भाजपा महर्षि कश्यप, निषादराज और भगवान राम के चित्र दिखाकर जनता से वोट लेती है, लेकिन इन महापुरुषों के बताये मार्ग पर नहीं चलती। भाजपा शासनकाल में महंगाई, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, महिलाओं-बच्चियों के साथ अपराधों में बाढ़ सी आ गई है। सत्ता संरक्षित संगठित अपराध चरम पर हैं। शहरों-कस्बों में कूड़े के अंबार लगे हैं। शहर और गांव की गलियां गंदगी से पटी पड़ी हैं। इससे गरीब मजदूर के स्वास्थ्य पर गलत प्रभाव पड़ रहा है। अन्ना पशु सैकड़ों की तादाद में सड़कों में घूम रहे हैं। योगी सरकार के दावे के विपरीत नगर पालिका के कर्मचारी पशुओं को सड़कों से हटाने में नाकाम है। नगर पालिकाओं में भ्रष्टाचार चरम पर है। आने वाले नगर निकाय चुनाव में प्रदेश की जनता भाजपा को वोट के रूप में जवाब देगी। जिला प्रवक्ता सुभाष पटेल ने कहा आरएसएस और भाजपा का चिंतन, सोच और कार्य संविधान, दलित, पिछड़ा व महिला विरोधी है। पार्टी के वरिष्ठ नेता राधेश्याम निषाद ने कहा कि भाजपा सरकार दलित-पिछड़ों का आरक्षण खा रही है। पढ़े-लिखे नौजवान रोजगार को सड़कों में मारे-मारे घूम रहे हैं। किसान, मजदूर व छोटे कारोबारी कमरतोड़ महंगाई से कराह रहे हैं। इस मौके पर जिला उपाध्यक्ष मो गुलाब खान, मान सिंह पटेल, रामचंद्र वर्मा। मुन्नालाल सोनकर, गया प्रसाद सविता, मो सलीम, राम प्रसाद वर्मा, कैलाश बौद्ध, उमाकांत यादव, फूलचंद यादव, सियाराम गुप्ता, रामनरेश अग्रहरि, लवकुश अग्रहरि, पप्पू जायसवाल, अनूप यादव, देवेंद्र पटेल, उर्मिला निषाद, कुबेर निषाद, हीरालाल पटेल, राम प्रसाद वर्मा, संदीप प्रजापति, रोहित यादव, दिनेश अनुरागी, हिमांशु गुप्ता आदि मौजूद रहे।

दम्पति में पुलिस ने कराई सुलह

अखंड भारत संदेश

चित्रकूट। पुलिस अधीक्षक श्रीमती वृन्दा शुक्ला के निर्देश पर महिला थाना पुलिस टीम ने दम्पति के आपसी विवाद को समाप्त कराकर सुलह कराते हुये शादी के अटूट बंधन को टूटने से बचाया।

बुधवार को राजापुर थाना क्षेत्र की श्रीमती दीक्षा पत्नी हेमराज ने महिला थाने में दिये पत्र में कहा कि पति हेमराज पुत्र शिवमोहन निवासी नयागांव चित्रकूट सतना मप्र उसके साथ आये दिन विवाद करता है। घर में नहीं रखता है। महिला थानाध्यक्ष श्रीमती शालिनी सिंह भदौरिया ने शिकायतकर्ता महिला की शिकायतों को विस्तार से समझकर दूसरे पक्ष को थाने बुलाया। दोनों पक्षों के बीच भविष्य में आपस में विवाद न करने तथा पति-पत्नी के कर्तव्यों का सही ढंग से पालन करने की सलाह दी।

आपसी सुलह होने पर दम्पति साथ चले गये।

टीम में महिला थानाध्यक्ष श्रीमती शालिनी सिंह भदौरिया, महिला सिपाही रीता यादव, शिवानी सिंह, नीतू द्विवेदी शामिल रहीं।

दो बाइकों की आमने-सामने की भिड़ंत में एक युवक की मौत

अफजलगढ़। थाना क्षेत्र के गांव भिक्कावाला में दो बाइकों की आमने-सामने की भिड़ंत में एक युवक की मौत जबकि तीन लोग घायल घायलों को पुलिस की मदद से सीएचसी में भर्ती कराया गया।

मंगलवार की देर शाम उत्तराखंड नई कॉलोनी कालागढ़ निवासी विकास उम्र 30 वर्ष पुत्र राधे अपने दोस्त मोहित कुमार उम्र 26 वर्ष पुत्र रोहिताश के साथ अपनी बाइक से दवाई लेकर अपने घर वापस जा रहा था। वही रेहड़ थाना क्षेत्र के गांव बादीगढ़ निवासी मनोज कुमार पुत्र अशोक कुमार तथा गांव राजनगर थाना रेहड़ निवासी विनीत कुमार उम्र 22 वर्ष पुत्र प्रमोद अपनी बाइक से कालागढ़ की ओर से आ रहे थे। जैसे ही दोनों बाइकें गांव भिक्कावाला के समीप पहुंची तो बाइकों की आमने-सामने की भिड़ंत हो गई।

निकाय चुनाव को लेकर एसडीएम डीप शिखा सिंह ने स्ट्रांग रूम व मतदेय स्थलों का किया निरीक्षण

सिकन्दरपुर। निकाय चुनाव के मद्देनजर एसडीएम सिकंदरपुर दीपशिखा सिंह ने मंगलवार को जूनियर हाई स्कूल सिकंदरपुर में स्ट्रांग रूम व मतगणना स्थल व पब्लिक भूतों का जायजा लिया। इस दौरान उन्होंने पुरानी पानी टंकी,दारुल उलूम, सरकारी आरसी , टाउन प्राथमिक विद्यालय, मुड़ियापुर हजरत आसी जूनियर हाई स्कूल, अनुपम शिक्षण संस्थान, सरस्वती शिशु मंदिर,सरकारी बीज गोदाम, कन्या प्राथमिक पाठशाला आदि जगहों का निरीक्षण किया।

न्यूज झरोखा

जिला अस्पताल में मरीजों के इलाज में न करें कोताही: सीएमएस

अखंड भारत संदेश

चित्रकूट। जिला अस्पताल में मई 2022 से सीएमएस डॉ सुधीर शर्मा ने जब से कार्यभार ग्रहण किया है, तब से वे जिला अस्पताल की व्यवस्थायें चैकस रखने को मुस्तैद हैं। उन्होंने अस्पताल की व्यवस्था चैकस रखने की गरज से स्टाफ के कुछ लोगों पर अंकुश लगाया तो लोग उन्हीं पर आरोप लगाने लगे।

बुधवार को जिला अस्पताल के सीएमएस डॉ सुधीर शर्मा ने सभी डॉक्टरों एवं स्टाफ के लोगों से कहा है कि संयुक्त जिला अस्पताल में पैथोलॉजी लैब संचालन छह अप्रैल से 24 घंटे खुला रहेगा। जिला अस्पताल आने वाले सभी मरीज को ये कहकर इलाज में लापरवाही बरतने वाले, ये न कहें कि कल रिपोर्ट मिलेगी। रिपोर्ट की सुविधा 24 घंटे उपलब्ध है। किसी भी मरीज के इलाज में लापरवाही बर्दास्त नहीं की जायेगी।

जिला अस्पताल के सीएमएस डॉ सुधीर शर्मा का ये आदेश स्टाफ के कुछ लोगों को खासा खटकता है। उन्होंने इसकी परवाह न करते हुए स्टाफ के लोगों से मरीजों को बेहतर सुविधा देने के कडे निर्देश दिये हैं।

एसपी के निर्देश पर गांजा समेत आठ दबोचे, अभियान के तहत हुई गिरफ्तारी

अखंड भारत संदेश

चित्रकूट। पुलिस अधीक्षक श्रीमती वृंदा शुक्ला के निर्देश पर मादक पदार्थों की तस्करी एवं बिक्री की रोकथाम को जारी अभियान में बरगढ़ थानाध्यक्ष योगेश कुमार तिवारी की अगुवाई में दरोगा राजेन्द्र प्रताप सिंह की टीम ने सुशील कुमार मिश्र पुत्र रामनरेश निवासी मिश्रन पुरवा थाना राजापुर को दो किलो गांजा के साथ दबोचा है। उसके खिलाफ एनडीपीएस एक्ट दर्जकर जेल भेजा है।

बुधवार को इसी क्रम में वाँछितों-वारंटी की गिरफ्तारी को जारी अभियान में पहाडी थाने के दरोगा राहुल कुमार पाण्डेय की टीम ने वारंटी राजबहादुर पुत्र मिश्रिवा, रामेश्वर पुत्र मिश्रिवा निवासी डहरिया पुरवा मजरा चैरा को गिरफ्तार किया है। उन्होंने वारंटी मेडेलाल पुत्र गायत्री निवासी पचोखर, आर्म्स एक्ट के वारंटी अवधेश पुत्र महादेव निवासी शिवपुरी को भी दबोचा है।

इसी प्रकार राजापुर थाने के दरोगा प्रभाकर उपाध्याय ने दहेज एक्ट के वारंटी शिवशंकर पुत्र अमरनाथ निवासी उदघटा को गिरफ्तार किया है। मानिकपुर थाने के दरोगा हारुन रसीद ने वारंटी चुनकावन पुत्र रामेश्वर निवासी निही व दरोगा अरविन्द पाण्डेय ने वारंटी संजय पुत्र बालकृष्ण जायसवाल निवासी गांधीनगर को गिरफ्तार कर जेल भेजा है।

गेंहू की खेत में लगी आग को ट्रैक्टर से स्टंट करते हुए युवक का वीडियो हुआ वायरल

बलिया। सुखपुरा थाना क्षेत्र के आसन गांव से एक वीडियो सोशल मीडिया पर तेजी से वायरल हो रहा है इस वायरल वीडियो में अज्ञात कारणों से लगी गेहूं की खड़ी फसल में आग लगने के बाद ग्रामीण युवको के द्वारा एक हैरतगेज कारनामा देखने को मिला।जहाँ ट्रैक्टर से आग बुझाने का वीडियो सोशल मीडिया पर वायरल हो रहा है । आग लपटों के बीच लगभग तीन ट्रैक्टर घुमाया जा रहा था और इस स्टंट को लोग खड़े होकर देख रहे थे।

जब थाना को ग्रामीणों ने सूचना दी तो पुलिस ने फायर ब्रिगेड को सूचना दी। जहाँ फायर ब्रिगेड के आने से पहले ट्रैक्टर से गांव के कुछ युवकों ने सूझबूझ का परिचय दिया। और युवकों ने आग पर काबू पा लिया था। फायर ब्रिगेड को थाने पहुँचने पर सूचना मिली कि गांव के कुछ युवकों ने आग को पूरी तरह से बुझा दिया हैं। यह वायरल वीडियो लगभग तीन पहले का बताया जा रहा हैं।

पूर्व डीएम और सीडीओ के रोक के बावजूद मनबढ़ पंचायत सचिवों ने निकाला लाखों रुपए

सुलतानपुर। जिले के तत्कालीन जिलाधिकारी रवीश गुप्ता एवं सीडीओ अतुल वत्स के आदेशों के बावजूद मनबढ़ पंचायत सचिवों ने ब्लाक दूबेपुर के ग्राम सभा भाई में रेडीमेड सामानों की खरीदारी कर शासकीय हानि पहुंचाकर ग्राम प्रधान और सचिव सहित ठेकेदारों ने शासकीय धन का बंदरबाँट कर लाखों का घोटाला कर लिया है।

भाई ग्राम पंचायत में कुर्सी, स्ट्रीट लाइट,हैण्डपम्प रिबोर आदि कार्यों में अनियमितता पाई गई है। फिलहाल ये सिर्फ एक ग्राम सभा मे मामला सामने आया है जांच हुई तो कई ग्राम पंचायत इसकी जद में आएंगे और ग्राम पंचायत अधिकारी और प्रधान चपेट में आएंगे।

मामले में डीपीआरओ अभिषेक शुक्ल से वार्ता की गई तो उनका कहना है कि मामला संज्ञान में आया है इसकी जांच में स्वयं करूंगा और दोषी सचिवों पर कठोर कार्रवाई भी करूंगा उन्होंने कहा कि संबंधित सभी फाइलों को अपने कार्यालय तलब कर और दोषी सचिव और प्रधान के खिलाफ निलंबन की नोटिस जारी कर जवाब तलब करूंगा इतना ही नहीं उनका कहना है तत्कालीन उच्चाधिकारियों के रोक के बावजूद कैसे इन सचिवों ने रेडीमेड उपकरण खरीद लिए हैं जांच कर इन सभी सचिवों के खिलाफ कार्यवाही की जाएगी और इसको शासन तक अवगत कराया जाएगा।

जनऊपुर में हनुमत जन्मोत्सव पर होगें विविध कार्यक्रम

रतसर (बलिया)। क्षेत्र के प्रतिष्ठित हनुमान मन्दिर जनऊपुर में बुद्धवार को श्री हनुमान जन्मोत्सव के अवसर पर विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए जाएंगे। मन्दिर समिति द्वारा जन्मोत्सव कार्यक्रम को भव्य व दिव्य रूप से मनाए जाने के लिए की जा रही तैयारियां पूरी कर ली गई है। हनुमत सेवा ट्रस्ट समिति के संयोजक उमेश पाण्डेय ने बताया कि बुद्धवार को सुबह 8 बजे से अखण्ड राम नाम संकीर्तन का पाठ किया जाएगा।

वहीं वृहस्पतिवार को सुबह 8 बजे से मंदिर के गर्भगृह में अभिषेक, पूजन व चोला श्रृंगार के साथ कार्यक्रम प्रारंभ होगा। 9 बजे आरती होगी। दोपहर 12.30 बजे से हवन प्रारंभ होगा इसके बाद महाआरती होगी। शाम 6 बजे से विशाल भंडारा प्रारंभ होगा। हनुमत ट्रस्ट द्वारा हनुमान जन्मोत्सव के अवसर पर आयोजित सभी धार्मिक कार्यक्रमों में शामिल होने का आग्रह भक्तों,श्रद्धालुओं से किया गया है।

चौकी प्रभारी अखिलेश नारायण सिंह ने सुहेल देव स्वाभिमान पार्टी की बैठक को कराया स्थगित

रतसर (बलिया)। आगामी त्योहारों को लेकर जनपद में 30 अप्रैल तक धारा-144 लागू की गई है। जिला मजिस्ट्रेट के निर्देश पर जनपद के सीमा के अन्तर्गत किसी भी सार्वजनिक स्थानों पर पांच या पांच से अधिक व्यक्ति एक समूह के रूप में एक साथ एकत्रित नहीं होगे और न ही कोई जुलूस निकालेंगे और न ही कोई धरना प्रदर्शन करेगा और न ही कोई ऐसी अफवाह फैलाएंगे, जिससे शान्ति व्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े।

मंगलवार को नव सृजित नगर पंचायत में सुहेल देव स्वाभिमान पार्टी द्वारा कस्बा स्थित बीका भगत के पोखरे पर बैठक को लेकर तैयारी चल रही थी। बैठक की सूचना मिलते ही चौकी प्रभारी अपने हमराहियों के साथ बीका भगत के पोखरे पर पहुंचकर बैठक स्थगित करा दी। चौकी प्रभारी अखिलेश नारायण सिंह ने बताया कि कोई भी व्यक्ति ऐसा भाषण या नारा नहीं लगाएगा न ही इस प्रकार का प्रचार प्रसार करेगा। कोई भी व्यक्ति नई परम्परा अथवा गैर परम्परागत कार्यक्रम नहीं करेगा। बताया कि आदेश का उल्लघंन भारतीय दण्ड विधान की धारा 188 के अन्तर्गत दण्डनीय अपराध होगा।

रेलवे ई-टिकटों के अवैध कारोबार में संलिप्त एक दलाल की हुई गिरफ्तारी

बलिया- वरिष्ठ मंडल सुरक्षा आयुक्त वाराणसी डॉ.अभिषेक के निर्देशन में प्रभारी निरीक्षक बलिया बी . के. सिंह साथ उप निरीक्षक जयेंद्र कुमार मिश्रा, हेड कांस्टेबल उदय प्रताप यादव, कांस्टेबल भीम चौरसिया, कॉन्स्टेबल अजय कुमार यादव, कांस्टेबल अमित मिश्र, कांस्टेबल पंकज साह द्वारा मुखबिर खास की सूचना के आधार पर ग्राम कृपालपुर पोस्ट सोनवानी, थाना हल्दी स्थित विवेक जन सेवा केंद्र पर छापा मारकर उक्त दुकान के संचालक विवेक वर्मा पुत्र शंभू नाथ वर्मा निवासी कृपालपुर पोस्ट-सोनवानी, थाना-हल्दी, जिला बलिया उम्र 43 वर्ष को फेक नाम पते से कुल 08 अदद फर्जी पर्सनल यूजर आईडी से आईआरसीटी के वेबसाइट पर बनाए गए लगभग 55000 रुपए का अवैध रेल ई-टिकट के साथ गिरफ्तार किया गया।

बेडीपुलिया से पिपरावल नाले तक जल्द बनायें नाला: डीएम

पेयजल-विद्युत न हो बाधित

अखंड भारत संदेश

चित्रकूट। जिलाधिकारी अभिषेक आनन्द ने बेड़ीपुलिया से पिपरावल नाला कर्वी तक सडक किनारे नाला निर्माण कार्य की प्रगति तेजी से करने के निर्देश दिये।

बुधवार को जिलाधिकारी ने कलेक्ट्रेट सभागार में समीक्षा बैठक में अध्यक्षता करते हुए अधिशासी अभियंता राष्ट्रीय राजमार्ग को निर्देश दिए कि बेड़ीपुलिया से नाला का कार्य जल्द करें। पिपरावल नाला की ओर से भी कार्य शुरू करायें, ताकि कार्य में तेजी आ सके। निर्माण में मशीनरी के साथ मजदूरों से भी कार्य करायें, ताकि पेयजल-विद्युत व्यवस्था बाधित न हो। ठेकेदार को निर्देश दे कि संबंधित विभागों के अधिकारियों-कर्मचारियों से संपर्क कर कार्य करायें। ट्रैफिक चैराहा से पटेल तिराहा तक सडक चैड़ीकरण में नाला व इंटरलॉकिंग की डिजाइन बना ले। बेड़ीपुलिया से पिपरावल नाला तक दोनों ओर का लेआउट बनायें। नाला के कार्य को तेजी से

करायें। इंटरलॉकिंग का कार्य भी शुरू करायें। जिलाधिकारी को खोह रेलवे ब्रिज की बाबत अधिशासी अभियंता राष्ट्रीय राजमार्ग ने बताया कि रेलवे से डिजाइन मंजूर कर ली है। विभाग में आरओ स्तर पर कार्यवाही लंबित है, जल्द कार्य शुरू होगा। जिलाधिकारी ने कहा कि मंदाकिनी नदी कर्वी में पुल निर्माण होना है, उसका भी डीपीआर बनाकर शासन को भेजा जाए। अधिशासी अभियंता जल संस्थान से कहा कि जहां से पेयजल की पाइप लाइन पड़ी है, उसको चिन्हित करा लें, ताकि नाले का कार्य पाइपलाइन के बाद कराया जा सके। अधिशासी अभियंता विद्युत से कहा कि अपने कर्मचारियों की भी ड्यूटी लगायें। इसी प्रकार जल संस्थान भी व्यवस्था करें। अधिशासी अधिकारी नगर पालिका कर्वी से कहा कि जल संस्थान का इस कार्य में सहयोग करें, ताकि सड़क के दोनों तरफ कार्य को तेजी से कराया जा सके। विद्युत तथा पेयजल को लेकर किसी प्रकार की जनता को समस्या न हो। बैठक में उप जिलाधिकारी राजबहादुर, अधिशासी अभियंता विद्युत आरएस वर्मा, ईओ नगर पालिका लालजी यादव समेत राष्ट्रीय राजमार्ग के अधिकारी मौजूद रहे।

जगजीवन राम ने दलितों के लिए आजीवन किया संघर्ष: कुशल

बाबू जगजीवन राम की मनाई जयंती

अखंड भारत संदेश

चित्रकूट। आधुनिक भारतीय राजनीति के शिखर पुरूष भारत के पूर्व उपप्रधानमंत्री स्व बाबू जगजीवन राम व निषादों के राजा महाराजा गुहराज निषादराज की जयन्ती में कांग्रेस जिलाध्यक्ष कुशल सिंह पटेल ने कहा कि जगजीवन राम का सम्पूर्ण जीवन राजनैतिक, सामाजिक सक्रियता और विशिष्ट उपलब्धियों से भरा है। सदियों से शोषित-उत्पीड़ित दलितों-मजदूरों के मूलभूत अधिकारों के रक्षा को जगजीवन राम के कानूनी प्रावधान ऐतेहासिक हैं।बुधवार को कांग्रेस जिला कार्यालय में हुई बैठक में जिलाध्यक्ष कुशल सिंह पटेल ने कहा कि जगजीवन राम ऐसे व्यक्ति थे, जिसने कभी अन्याय से समझौता नहीं किया। दलितों के सम्मान को

संघर्ष करते रहे। विद्यार्थी जीवन से ही उन्होंने अन्याय के खिलाफ आवाज उठाई। जिला सचिव विजयमणि त्रिपाठी ने कहा कि बाबू जगजीवन राम का भारत मे संसदीय लोकतंत्र के विकास में महत्वपूर्ण योगदान है। सेवादल अध्यक्ष चुनवाद प्रषाद ने कहा कि निषादों के राजा महाराज गुहराज निषादराज की भी जयन्ती है। ये श्रंगवेरपुर वर्तमान प्रयागराज के राजा थे। उन्होंने वनवास काल मे राम-सीता तथा सेवको को गंगा पार करवाया था। वनवास के बाद श्रीराम ने रात मित्र निषादराज के घर में बिताई थी। बैठक में अवधेश करवरिया, जिला उपाध्यक्ष शिवगुलाम वर्मा, ओम प्रकाश गुप्ता, मानवेन्द्र सिंह पटेल, सलमान सिद्दीकी, निरंजन कुशवाहा, बैजनाथ कुशवाहा, पुरुषोतम यादव, अजय यादव, जिला सचिव जमुना शुक्ला, मनोज द्विवेदी आदि कांग्रेस कार्यकर्ता मौजूद रहे।

आयुष्मान भारत योजना गरीबों के लिए बनी मजाक, कार्ड होने पर नहीं मिला इलाज

अखंड भारत संदेश

चित्रकूट। प्रधानमंत्री आयुष्मान भारत जन आरोग्य योजना देश के गरीब जरूरतमंद लोगों के स्वास्थ्य के लिहाज से कल्याणकारी है। योजना के तहत जरूरतमंद लोगों को पांच लाख रुपये तक मुफ्त इलाज की सुविधा मुहैया होती है। अब यह सरकारी योजना अव्यवस्था की भेंट चढ़ रही है। जिले में आयुष्मान भारत योजना की यही दशा है।

बुधवार को यहां एक मरीज ने डॉक्टर को आयुष्मान कार्ड दिखाया तो डॉक्टरों ने कार्ड पर इलाज करने से मना कर दिया। पीड़ित मरीज ने पैसे देकर खुद का इलाज कराया। किसान राकेश प्रजापति के चार बच्चों में तीन बेटियां व एक बेटा है। किसान मारकुंडी थाने के अमचुरनेरुआ के मजरा भेडा कोलान का है। अपनी पत्नी का इलाज कराने को जिला अस्पताल के कई चक्कर लगाये हैं। जिला अस्पताल में

राकेश को आयुष्मान कार्ड से कोई इलाज नहीं मिला। आयुष्मान कार्ड लेकर वह सद्गुरु नेत्र चिकित्सालय पहुंचा तो पत्नी को अस्पताल में भर्ती करा दिया। पत्नी का पथरी के इलाज को 30 से 45 हजार रुपए का खर्च लगना है।

किसान ने आयुष्मान कार्ड दिखाया तो सद्गुरु नेत्र चिकित्सालय के डॉक्टरों ने इलाज से साफ मनाकर दिया। ऐसी हालात में पीड़ित किसान ने कर्ज लेकर पत्नी की पथरी का इलाज कराया। पीड़ित किसान ने कहा कि आयुष्मान कार्ड सिर्फ दिखावा है।

गरीब, किसान, मजदूर के लिए किसी काम का नहीं है। सरकार के दावे खोखले नजर आते हैं। इस बाबत सीएमओ डॉ भूपेश द्विवेदी ने बताया कि ऐसी बात उनके सामने नहीं आई। पीड़ित किसान के साथ ऐसा हुआ है तो जांच कराकर कार्यवाही की जायेगी।

सुप्रीम कोर्ट ने पंजाब में चुनाव स्थगित करने को असंवैधानिक ठहराया

इस्लामाबाद। पाकिस्तान के सुप्रीम कोर्ट ने पंजाब प्रांत में आठ अक्टूबर तक चुनाव स्थगित करने के निर्वाचन आयोग के फैसले को असंवैधानिक करार दिया, जो संघीय सरकार के लिए एक झटका है।पाकिस्तान की शीर्ष अदालत ने प्रांत में मतदान के लिए 14 मई की तारीख भी तय की। इस मामले पर पाकिस्तान के प्रधान न्यायाधीश उमर अता बंदियाल, न्यायमूर्ति मुनीब अख्तर और न्यायमूर्ति इजाजुल अहसन वाली पीठ ने फैसला सुनाया।

इस फैसले से पूर्व प्रधानमंत्री इमरान खान के नेतृत्व वाली पाकिस्तान तहरीक-ए-इंसाफ पार्टी को बल मिला है। संघीय सरकार सुरक्षा मुद्दों और आर्थिक संकट का हवाला देते हुए प्रांतीय चुनाव में देरी कर रही थी। देश के मंत्रिमंडल ने शीर्ष अदालत के फैसले को खारिज कर दिया। प्रधानमंत्री शहबाज शरीफ ने पाकिस्तान के पूर्व प्रधानमंत्री जुल्फिकार अली भुट्टो का उल्लेख करते हुए कहा कि 4 अप्रैल, 1979 को उनकी हत्या हुई थी और आज उसी तारीख को उच्चतम न्यायालय के एक फैसले के साथ उस दुर्भाग्यपूर्ण प्रकरण को दोहराया गया है। नेशनल एसेंबली में शरीफ ने दोनों फैसलों की तुलना करते हुए कहा कि आज न्याय की हत्या हुई है और यह अत्यंत खेदजनक है। उन्होंने कहा कि दुनिया जानती है कि भुट्टो का मामला एक न्यायिक हत्या का था। उन्होंने कहा कि मामले में फैसला सुनाने वाले पूर्व न्यायाधीशों में से एक ने इसे अपने संस्मरण में स्वीकार किया था। पाकिस्तान के निर्वाचन आयोग (ईसीपी) ने 22 मार्च को राजनीतिक रूप से महत्वपूर्ण पंजाब प्रांत में विधानसभा चुनाव पांच महीने से अधिक समय के लिए टाल दिए। उसने यह फैसला नकदी की कमी का हवाला देते हुए किया। पाकिस्तान के पूर्व प्रधानमंत्री एवं तहरीक-ए-इंसाफ (पीटीआई) पार्टी अध्यक्ष इमरान खान ने इस कदम की आलोचना की थी। शीर्ष अदालत की इमारत के बाहर सुरक्षा के कड़े इंतजाम थे और मुख्य प्रवेश द्वार पर पुलिस की बड़ी टुकड़ी पहरा दे रही थी। शीर्ष अदालत ने ईसीपी के फैसले को अवैध और असंवैधानिक करार दिया। अदालत ने फैसले में कहा, पाकिस्तान के निर्वाचन आयोग के 22.03.2023 वाले विवादित आदेश को असंवैधानिक घोषित किया जाता है, जो बिना वैध प्राधिकार या अधिकार क्षेत्र के था, उसका कोई कानूनी प्रभाव नहीं था, इसलिए उसे रद्द किया जाता है। इसमें कहा गया है, न तो संविधान और न ही कानून निर्वाचन आयोग को संविधान के अनुच्छेद 224 (2) में प्रदान की गई 90 दिनों की अवधि से आगे चुनाव की तारीख बढ़ाने का अधिकार देता है।

अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप अदालत में आपराधिक मामले की सुनवाई से पहले हिरासत में लिए गए

न्यूयॉर्क। अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप को वर्ष 2016 के राष्ट्रपति चुनाव से पहले एडल्ट फिल्मों की अभिनेत्री को चुप कराने के बदले में धन देने संबंधी आपराधिक मामले की सुनवाई से पहले मैनहट्टन जिला अटॉर्नी के कार्यालय में हिरासत में ले लिया गया। वह सुनवाई के लिए मैनहट्टन की अदालत में पेश हुए थे।

ट्रंप के पहुंचने से पहले वहां सुरक्षा के कड़े इंतजाम किए गए थे। ट्रंप आठ कारों के काफिले से अदालत पहुंचे। उम्मीद है कि ट्रंप के फिंगर प्रिंट लिया जाएगा और अन्य प्रक्रियाओं का भी पालन किया जाएगा। ट्रंप की तस्वीर भी ली जा सकती है। रिपोर्ट के मुताबिक अदालत में अपनी पेशी से पहले ट्रंप मैनहट्टन जिला अटॉर्नी के कार्यालय में पुलिस

ट्रंप के पहुंचने से पहले वहां सुरक्षा के कड़े इंतजाम किए गए थे। ट्रंप आठ कारों के काफिले से अदालत पहुंचे। उम्मीद है कि ट्रंप के फिंगर प्रिंट लिया जाएगा और अन्य प्रक्रियाओं का भी पालन किया जाएगा।

हिरासत में हैं। वह अमेरिका के पहले पूर्व राष्ट्रपति हैं जो आपराधिक मामले की सुनवाई का सामना करेंगे। वह न्यायाधीश जुआन मर्चेन के सामने आत्मसमर्पण करेंगे। अमेरिकी मीडिया ने ट्रंप के वकील के हवाले से बताया कि वर्ष 2024 में व्हाइट हाउस की दौड़ में शामिल होने के इच्छुक 74 वर्षीय रिपब्लिकन नेता अदालत के समक्ष आपराधिक मामले में दोषी होने से इनकार करेंगे। वह वयस्क फिल्मों की अभिनेत्री स्टार्मी डेनियल को धन देने की वजह से इस मामले का सामना कर रहे हैं।

अदालत में पेश होने के तुरंत बाद ट्रंप फ्लोरिडा लौट जाएंगे और शाम को पाम बीच स्थित अपने घर मार-आ-लागो में बयान देंगे। उम्मीद है कि ट्रंप के खिलाफ आरोपों की सुनवाई संक्षिप्त होगी। सुनवाई के दौरान उनपर लगे अभियोग को पढ़ा जाएगा जिसमें 10 से 15 मिनट का समय लगने की उम्मीद है। हालांकि ट्रंप ने आरोपों से इनकार किया है। जानकारी के मुताबिक ट्रंप पर कारोबार से जुड़े 30 से अधिक अभियोग लगाए गए हैं।

चीन ने फिर नकारी गुब्बारे से अमेरिका की जासूसी की बात, लेकिन शक की वजह भी खुद दे दी

बीजिंग। बीते दिनों चीन के जासूसी गुब्बारे के अमेरिका के हवाई क्षेत्र में दाखिल होने का मामला खूब सुर्खियों में रहा था। हालांकि चीन ने जासूसी की बात से इनकार किया था। अब एक बार फिर चीन ने जासूसी की बात से इनकार किया है। चीन के विदेश मंत्रालय ने एक बयान जारी किया है। जिसमें कहा कि अमेरिका के हवाई क्षेत्र में दाखिल हुआ अनमैन्ड एयरशिप पूरी तरह से अप्रत्याशित थी।

चीन के विदेश मंत्रालय ने जारी किया बयान

चीन के विदेश मंत्रालय की प्रवक्ता माओ निंग ने कथित जासूसी गुब्बारे को लेकर सवाल किया गया था। जिस पर उन्होंने कहा कि हमने कई बार साफ किया है और एक बार फिर कह रहे हैं कि अनमैन्ड नागरिक एयरशिप का अमेरिकी हवाई क्षेत्र में दाखिल होना पूरी तरह से अप्रत्याशित घटना थी। चीन इस घटना को बहुत ज्यादा बढ़ा-चढ़ाकर पेश करने को खारिज करता है।

चीन ने शक की वजह भी खुद दी- बता दें कि चीन का कहना है कि जिस गुब्बारे को जासूसी गुब्बारा बताया जा रहा है, वह असल में मौसम की जानकारी और रिसर्च के उद्देश्य के लिए था। हालांकि चीन ने शक की वजह भी खुद दे दी है। दरअसल कई बार पूछे जाने के बाद भी चीन ने उस कंपनी का नाम नहीं बताया है, जिसका संबंध इस गुब्बारे से है। चीन के विदेश मंत्रालय के ताजा बयान में भी गुब्बारा किस कंपनी से संबंधित था, इसकी जानकारी नहीं दी गई है।

पेंटागन कर रहा जांच

चीन के विदेश मंत्रालय का यह बयान ऐसे वक्त आया है, जब अमेरिका के पेंटागन की प्रवक्ता सबरीना सिंह ने सोमवार को ही अपने एक बयान में कहा था कि चीन के जासूसी गुब्बारे की जांच और समीक्षा की जा रही है। पेंटागन की प्रवक्ता सबरीना सिंह ने जासूसी गुब्बारे को लेकर पूछे गए सवाल के जवाब में कहा कि अभी की स्थिति ये है कि हम अभी भी समीक्षा कर रहे हैं कि असल में चीन ने जासूसी गुब्बारे में क्या सूचनाएं इकट्ठा की। अमेरिका के एक पूर्व वरिष्ठ अधिकारी ने बताया कि चीन जासूसी गुब्बारे को हवा में संचालित करने में सक्षम था, ऐसे में हो सकता है कि उसने अमेरिका के सैन्य बेस की निगरानी की हो। गुब्बारे में इलेक्ट्रॉनिक सिग्नल लगे थे और उन सिग्नल्स की मदद से रियल टाइम जानकारी बीजिंग भेजी जा सकती थी।

बता दें कि बीती 28 जनवरी को अमेरिका के राज्य अलास्का से एक जासूसी गुब्बारे ने अमेरिका के हवाई क्षेत्र में प्रवेश किया। इसके बाद 4 फरवरी तक यह विशाल गुब्बारा अमेरिका के कई राज्यों के ऊपर से होकर गुजरा। साथ ही कई सैन्य ठिकानों के ऊपर भी गुजरा। जिसके बाद आशंका जताई जा रही है कि इस गुब्बारे की मदद से खुफिया जानकारी इकट्ठा की गई। चार फरवरी को अमेरिका ने इस गुब्बारे को निशाना बनाकर गिरा दिया था और उसके अवशेषों की जांच की जा रही है।

अमेरिका ने अरुणाचल प्रदेश में स्थानों का नाम बदलने के चीन के प्रयास का 'कड़ा विरोध' किया

वाशिंगटन। चीन अपने पैंतरेबाजी से बाज नहीं आ रहा है। अब उसने भारतीय राज्य अरुणाचल प्रदेश के 11 स्थानों के नाम बदलने की कोशिश की है। इस पर अमेरिका ने कड़ी प्रतिक्रिया दी है। व्हाइट हाउस ने मंगलवार को कहा कि अमेरिका भारतीय क्षेत्र अरुणाचल प्रदेश पर दावा करने के चीन के प्रयासों का 'दृढ़ता से विरोध' करता है। यह हम पर और भारतीय क्षेत्र पर चीनी दावे का एक और प्रयास है। इसलिए, जैसा कि आप जानते हैं अमेरिका ने लंबे समय से उस क्षेत्र को मान्यता दी है और हम इन इलाकों का नाम बदलकर क्षेत्र के दावे को आगे बढ़ाने के किसी भी एकतरफा प्रयास का कड़ा विरोध करते हैं। व्हाइट हाउस की प्रेस सचिव करीन जीन-पियरे ने कहा कि यह ऐसी चीज है जिस पर हम लंबे समय से कुछ चीजों को लेकर कायम हैं। अमेरिका का यह बयान चीन के नागरिक मामलों के मंत्रालय द्वारा अरुणाचल प्रदेश में 11 स्थानों के नामों के मानकीकरण के बाद आया है, जिसे वह तिब्बत के दक्षिणी भाग जंगनान के रूप में संदर्भित करता है। ग्लोबल टाइम्स की रिपोर्ट के मुताबिक, चीन की कैबिनेट के स्टेट काउंसिल द्वारा जारी भौगोलिक नामों के नियमों के अनुसार अरुणाचल प्रदेश में 11 स्थानों के नाम चीनी अक्षरों, तिब्बती और पिनयिन भाषाओं में जारी किए हैं। मंत्रालय ने रविवार को 11 स्थानों के नामों की घोषणा की और दो आवासीय क्षेत्रों, पांच पर्वत चोटियों, दो नदियों और दो अन्य क्षेत्रों सहित सटीक निर्देशांक भी दिए। समाचार रिपोर्ट के अनुसार, चीन के नागरिक मामलों के मंत्रालय ने भी स्थानों के नाम और उनके अधीनस्थ प्रशासनिक जिलों की श्रेणी सूचीबद्ध की है। भारतीय विदेश मंत्रालय ने इस हरकत पर प्रतिक्रिया देते हुए कहा कि अरुणाचल प्रदेश के स्थानों का नाम बदलने की चीन की कोशिश को भारत ने सिरे से खारिज कर दिया है।

भारत ने कहा- यूएन सुरक्षा परिषद में सिर्फ अस्थायी श्रेणी में विस्तार करने से नहीं होगा समस्या का समाधान

संयुक्त राष्ट्र। संयुक्त राष्ट्र में भारत की स्थायी प्रतिनिधि रुचिरा कंबोज ने संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में अपनी स्थायी सीट के लिए भारत के दावे का बचाव करते हुए कहा कि अस्थायी सदस्यता का विस्तार करने से दोनों श्रेणी के सदस्यों के बीच मतभेद बढ़ जाएगा। यूएनएससी को संबोधित करते हुए कंबोज ने कहा, भारत स्थायी और अस्थायी दोनों श्रेणियों में संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की सदस्यता के विस्तार के पक्ष में है लेकिन सिर्फ अस्थायी श्रेणी में विस्तार करने से समस्या का समाधान नहीं होगा। यह स्थायी और अस्थायी सदस्यों के बीच के अंतर को और भी अधिक बढ़ा देगा और यह चीज वर्तमान भू-राजनीतिक परिस्थितियों के लिए उचित नहीं है। सुरक्षा परिषद की वर्तमान संरचना समकालीन वास्तविकताओं को प्रतिबिंबित नहीं करती है। इसमें सुधार की तत्काल आवश्यकता है।

विस्तार के पक्ष में हैं 122 में से 113 सदस्य

कंबोज ने संयुक्त राष्ट्र के 2015 के फ्रेमवर्क दस्तावेज का हवाला देते हुए कहा कि संयुक्त राष्ट्र के 122 में से 113 सदस्य दोनों मौजूदा श्रेणियों में विस्तार का समर्थन करते हैं। इसका अर्थ यह है कि दस्तावेज में 90 प्रतिशत से अधिक लिखित प्रस्तुतियां दोनों श्रेणियों की सदस्यता के विस्तार के पक्ष में हैं। फिर स्थायी सदस्यता का भी विस्तार क्यों किया जाना चाहिए।

कोस्टा रिका, पनामा और कैलिफोर्निया में भूकंप के झटके, 31 किमी गहराई तक हिली धरती

सैन जोस/ पनामा/ सैकरामेंटो। मध्य अमेरिकी देशों कोस्टा रिका और पनामा में भूकंप के झटके महसूस किये गए। इस दौरान 31 किलोमीटर गहराई तक धरती हिल गयी। पनामा में भूकंप के कुछ देर बाद ही अमेरिकी राज्य कैलिफोर्निया में भी भूकंप के झटके महसूस किये गए।

कोस्टा रिका में भूकंप की तीव्रता रिक्टर स्केल पर 6.4 नापी गयी। राष्ट्रीय भूकंप विज्ञान केंद्र (एनसीएस) के मुताबिक कोस्टा रिका की राजधानी सैन जोस में भूकंप के तेज झटके महसूस किये गए। भूकंप का केंद्र 31 किलोमीटर गहराई में था। तात्कालिक रूप से भूकंप के कारण जानमाल के नुकसान की सूचना नहीं है।

इसी तरह पनामा के तट पर आए भूकंप की तीव्रता रिक्टर पैमाने पर 6.6 नापी गयी। यूएस जियोलॉजिकल सर्वे के अनुसार भूकंप का केंद्र चिरिकि प्रांत में बोका चीका से 72 किलोमीटर दक्षिण में थे।

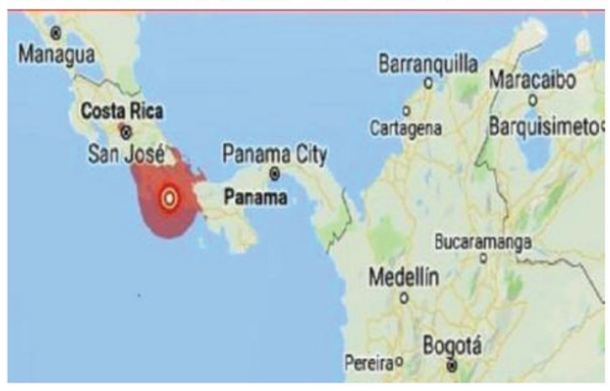

पनामा में भूकंप के झटके सामान्य गतिविधियों को प्रभावित करने वाले रहे। जिस समय भूकंप आया, उस समय एक फुटबाल मैच चल रहा था। मैच के दौरान धरती हिलते ही एक खिलाड़ी जमीन पर गिर गया। इस घटना का वीडियो भी स्थानीय टेलीविजन पर प्रसारित किया गया। मैदान पर कंपन और स्टेडियम की बत्तियां बुझने के कारण खेल को रोकना पड़ा। पनामा में भूकंप का केंद्र पृथ्वी की सतह से 10 किलोमीटर की गहराई में था। अमेरिकी सुनामी चेतावनी प्रणाली ने कहा कि भूकंप के बाद सुनामी का कोई खतरा नहीं है। पनामा में भूकंप आने के पांच मिनट बाद अमेरिकी राज्य कैलिफोर्निया में भी भूकंप के झटके महसूस किये गए। कैलिफोर्निया में भूकंप की तीव्रता रिक्टर पैमाने पर 4.5 नापी गयी।

रक्षा और प्रौद्योगिकी क्षेत्रों में भारत के साथ सहयोग बढ़ाने में मदद करेंगे नए अमेरिकी राजदूत

वाशिंगटन। भारत में अमेरिका के नए राजदूत एरिक गार्सेटी इसी माह (अप्रैल में) भारत में कामकाज संभाल सकते हैं। इस उम्मीद के बीच अमेरिका ने कहा है कि भारत में नए अमेरिकी राजदूत दोनों देशों के बीच रक्षा और प्रौद्योगिकी क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने में मदद करेंगे। अमेरिकी राष्ट्रपति की प्रेस सचिव केरेन जीन पिएरे ने कहा कि नए राजदूत भारत और अमेरिका के संबंधों को मजबूत करने की दिशा में काम करेंगे। साथ ही भारत और अमेरिका के बीच रक्षा, आर्थिक आदि क्षेत्रों में सहयोग को बढ़ाएंगे। पिएरे ने पत्रकारों से बातचीत में कहा कि अमेरिकी राष्ट्रपति पहले ही भारत के साथ संबंधों को दुनिया में सबसे ज्यादा अहमियत देने की बात कह चुके हैं। नए राजदूत गार्सेटी इस महत्वाकांक्षी कोशिश का नेतृत्व करेंगे और भारत के साथ क्रिटिकल और इमर्जिंग टेक्नोलॉजी में सहयोग बढ़ाएंगे। साथ ही रक्षा क्षेत्र में सहयोग बढ़ाएंगे और लोगों से लोगों के बीच संबंधों और आर्थिक संबंधों को भी मजबूत करेंगे। उल्लेखनीय है कि लॉस एंजिल्स के पूर्व मेयर एरिक गार्सेटी भारत में अमेरिका के नए राजदूत नियुक्त किये गए हैं। बीते 24 मार्च को ही अमेरिका की उपराष्ट्रपति कमला हैरिस ने एरिक गार्सेटी को पद और गोपनीयता का शपथ दिलाई थी। गार्सेटी का नामांकन बीते माह ही अमेरिका की संसद ने मंजूर किया था। बीते दो साल से भारत में अमेरिकी राजदूत का पद खाली है। जुलाई 2021 में राष्ट्रपति जो बाइडन ने एरिक गार्सेटी को भारत के राजदूत के रूप में नामांकित किया था लेकिन एरिक गार्सेटी पर लॉस एंजिल्स का मेयर रहते अपने स्टाफ के यौन उत्पीड़न के आरोप लगे थे। जिसके चलते गार्सेटी का नाम अमेरिकी संसद से मंजूर नहीं हो पा रहा था। दो साल के लंबे इंतजार के बाद गार्सेटी के नाम को मंजूरी मिली और अब वह जल्द ही अपना पदभार संभाल लेंगे।

नाटो में शामिल हुआ फिनलैंड, रूस को झटका, सुनक ने दी बधाई

ब्रसेल्स/ लंदन। दुनिया के सबसे बड़े सुरक्षा गठबंधन उत्तर अटलांटिक संधि संगठन (नाटो) सूची में फिनलैंड शामिल हो गया। फिनलैंड के नाटो में शामिल होने को रूस के लिए एक बड़ा झटका माना जा रहा है। वहीं ब्रिटेन के राष्ट्रपति सुनक ने फिनलैंड को नाटो में शामिल होने पर बधाई दी है। यूक्रेन पर रूस के हमले के बीच नाटो के विस्तार के बड़े रणनीतिक मायने निकाला जा रहा है। फिनलैंड दस्तावेजों को सौंपने के साथ ही नॉर्डिक राष्ट्र आधिकारिक तौर पर दुनिया के सबसे बड़े सुरक्षा गठबंधन का सदस्य बन गया। फिनलैंड की सदस्यता यूरोप के सुरक्षा परिदृश्य में एक बड़े बदलाव का प्रतिनिधित्व करती है। दूसरे विश्वयुद्ध में सोवियत संघ से अपनी हार के बाद इस देश ने तटस्थता अपनाई थी, लेकिन इसके नेताओं ने यूक्रेन पर मॉस्को के आक्रमण के कुछ महीने बाद ही संकेत दिया था कि वे नाटो गठबंधन में शामिल होना चाहते हैं। यह कदम रूस के राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन के लिए रणनीतिक और राजनीतिक रूप से झटका है। वह लंबे अरसे से शिकायत करते आए हैं कि नाटो रूस की ओर विस्तार कर रहा है।

वहीं, गठबंधन का कहना है कि इससे मॉस्को को कोई खतरा नहीं है।ॉरूस ने चेतावनी दी कि फनि्लैंड की नाटो की सदस्यता से उत्पन्न सुरक्षा खतरों से निपटने के लिए उसे प्रतिशोधी उपाय करने के लिए विवश होना पड़ेगा। मॉस्को ने यह भी कहा है कि अगर नाटो अपने 31वें सदस्य राष्ट्र के क्षेत्र में अतिरिक्त सैनिक या उपकरण तैनात करेगा, तो वह फिनलैंड की सीमा के पास अपनी रक्षा प्रणाली को मजबूत करेगा। फिनलैंड के विदेश मंत्री द्वारा अमेरिकी विदेश मंत्री एंटनी ब्लिंकन को दस्तावेज़ सौंपे जाने के बाद नाटो की सदस्यता आधिकारिक हो गई।

नाटो की सदस्यता से संबंधित दस्तावेज अमेरिकी विदेश विभाग के पास रहते हैं। ऐतिहासिक प्रक्रिया के पूरा होने से पहले नाटो महासचिव जनरल जेन स्टोलटेनबर्ग ने ब्रसेल्स में नाटो मुख्यालय में संवाददाताओं से कहा कि फिनलैंड की सहमति के बिना फिनलैंड में और नाटो सैनिक नहीं भेजे जाएंगे। संबंधित घटनाक्रम नाटो की 74वीं वर्षगांठ के दिन हुआ। चार अप्रैल 1949 को ही नाटो की स्थापना के लिए वाशिंगटन संधि पर हस्ताक्षर हुए थे। फिनलैंड के गठबंधन में शामिल होने वाले आग्रह को मंजूरी देने वाला तुर्किए नाटो का अंतिम देश है। उसने गुरु वार को ऐसा किया। 200 साल से किसी तरह के सैन्य गठबंधन से बचते आए पड़ोसी स्वीडन ने भी नाटो में शामिल होने के लिए आवेदन किया था, लेकिन तुर्किए और हंगरी की आपत्तियों के चलते प्रक्रिया में देरी हो रही है। रूस के साथ फिनलैंड की 1,340 किलोमीटर लंबी सीमा लगती है।

इस बीच, फिनलैंड की संसद ने कहा कि उसकी वेबसाइट पर एक हमला हुआ, जिससे साइट का उपयोग करना कठिन हो गया। रूस समर्थक हैकर समूह नोनेम057 (16) ने इसकी जिम्मेदारी लेते हुए कहा कि यह हमला फनि्लैंड के नाटो में शामिल होने का प्रतिशोध है।

'भारत के साथ संबंध सबसे अहम', नए राजदूत की नियुक्ति पर व्हाइट हाउस ने दिया बड़ा बयान

वाशिंगटन। भारत में अमेरिका के नए राजदूत एरिक गार्सेटी की नियुक्ति पर व्हाइट हाउस ने कहा है कि नए राजदूत भारत और अमेरिका के संबंधों को मजबूत करने की दिशा में काम करेंगे। साथ ही भारत और अमेरिका के बीच रक्षा, आर्थिक आदि क्षेत्रों में सहयोग को बढ़ाएंगे। बता दें कि लॉस एंजेलेस के पूर्व मेयर एरिक गार्सेटी भारत में अमेरिका के नए राजदूत होंगे। बीती 24 मार्च को ही अमेरिका की उपराष्ट्रपति कमला हैरिस ने एरिक गार्सेटी को पद और गोपनीयत का शपथ दिलाई थी।

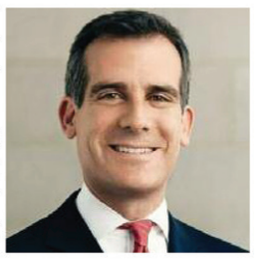

'भारत के साथ रिश्ते बेहद अहम'-व्हाइट हाउस की प्रेस सचिव केरेन जीन पिएरे ने रिपोर्टर्स को बताया कि 'राष्ट्रपति कह चुके हैं कि 'हम भारत के साथ संबंधों को दुनिया में सबसे ज्यादा अहमियत देते हैं। राजदूत गार्सेटी हमारी महत्वकांक्षी कोशिश का नेतृत्व करेंगे और भारत के साथ क्रिटिकल और इमर्जिंग टेक्नोलॉजी में सहयोग बढ़ाएंगे। साथ ही रक्षा क्षेत्र में सहयोग बढ़ाएंगे और लोगों से लोगों के बीच संबंधों और आर्थिक संबंधों को भी मजबूत करेंगे।' जीन पिएरे ने कहा कि राष्ट्रपति, भारत के साथ रिश्तों को बहुत अहमियत देते हैं।

इस महीने भारत आ सकते हैं अमेरिकी राजदूत

गौरतलब है कि इस महीने गार्सेटी भारत आ सकते हैं। गार्सेटी का नामांकन को बीते माह ही अमेरिका की संसद ने मंजूर किया था। बीते दो साल से भारत में अमेरिकी राजदूत का पद खाली है। जुलाई 2021 में राष्ट्रपति जो बाइडन ने एरिक गार्सेटी को भारत के राजदूत के रूप में नामांकित किया था लेकिन एरिक गार्सेटी पर लॉस एंजेलेस का मेयर रहते हुए अपने स्टाफ के यौन उत्पीड़न के आरोप लगे थे। जिसके चलते गार्सेटी का नाम अमेरिकी संसद से मंजूरी नहीं हो पा रहा था। दो साल के लंबे इंतजार के बाद गार्सेटी के नाम को मंजूरी मिली और अब वह जल्द ही अपना पदभार संभाल लेंगे।

अखंड भारत संदेश

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक
स्वामी श्री योगी सत्यम् फॉर योग सत्संग समिति
द्वारा विपिन इण्टरप्राइजेज
1/6C माधव कुंज
कटरा प्रयागराज से मुद्रित
एवं
क्रियायोग आश्रम एण्ड अनुसंधान संस्थान
झूंसी, प्रयागराज उत्तर प्रदेश
से प्रकाशित।

सम्पादक
स्वामी श्री योगी सत्यम्

RNI No: UPHIN/2001/09025

ऑफिस मो.:
9565333000

Email:-
akhandbharatsandesh1@gmail.com

सभी विवादों का न्याय क्षेत्र प्रयागराज होगा।

हरे निशान पर खुला शेयर बाजार, सेंसेक्स 300 अंक उछला

नई दिल्ली। मिले-जुले वैश्विक संकेतों के बीच बुधवार को शेयर बाजार हरे निशान पर खुला। शेयर बाजार के दोनों प्रमुख सूचकांक सेंसेक्स और निफ्टी में तेजी दिख रही है। बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज (बीएसई) का सेंसेक्स 299.72 अंक यानी 0.51 फीसदी उछलकर 59,406.16 के स्तर पर ट्रेंड कर रहा है। वहीं, नेशनल स्टॉक एक्सचेंज (एनएसई) का निफ्टी भी 73.70 अंक यानी 0.42 फीसदी की तेजी के साथ 17,471.75 के स्तर पर कारोबार कर रहा है। बाजार में शुरूआती कारोबार में बीएसई सेंसेक्स के 30 में से 15 शेयरों में तेजी देखने को मिल रही है।

पाकिस्तान में लग सकता है मार्शल लॉ! विदेश मंत्री बिलावल भुट्टो ने जताई आशंका

इस्लामाबाद। पाकिस्तान इन दिनों भीषण आर्थिक और राजनैतिक संकट से जूझ रहा है। इस बीच, पाकिस्तान के विदेश मंत्री बिलावल भुट्टो जरदारी ने संवैधानिक संकट के चलते देश में मार्शल लॉ या आपातकाल जैसी स्थिति होने की बात कही है। हालांकि उन्होंने कहा कि ये तब हो सकता है जब पंजाब और खैबर पख्तूनख्वा में चुनाव से संबंधित इमरान खान की पार्टी पीटीआई की याचिका पर सुनवाई के लिए सुप्रीम कोर्ट अपनी एक बड़ी बेंच का गठन नहीं करती है। इस दौरान उन्होंने चुनाव आयोग के आदेश के खिलाफ पीटीआई की याचिका पर तीन जजों की बेंच द्वारा दिया गया फैसला मानने से इनकार कर दिया। पाकिस्तान के विदेश मंत्री और पीपुल्स पार्टी (पीपीपी) के प्रमुख बिलावल भुट्टो ने सिंध प्रांत में अपनी सीट लरकाना में सोमवार को यह प्रतिक्रिया दी। उन्होंने कहा कि खैबर-पख्तूनख्वा (केपी) और पंजाब में चुनावों पर तीन न्यायाधीशों के किसी भी फैसले को उनकी पार्टी स्वीकार नहीं करेगी। उन्होंने कहा कि उनकी पार्टी फुल कोर्ट के फैसले को स्वीकार करेगी और उसे लागू करेगी।

उन्होंने कहा कि उनकी पीपीपी संविधान की रक्षा कर रही है। इसके संस्थापक जुल्फिकार अली भुट्टो ने देश को 1973 का संविधान दिया था, जिसे बाद में परवेज मुशर्रफ जैसे तानाशाहों ने खंडित कर दिया था, बावजूद इसके पूर्व राष्ट्रपति आसिफ अली जरदारी ने इसे बहाल कर दिया था।

इमरान खान पर साधा निशाना

इस दौरान उन्होंने पाकिस्तान के पूर्व प्रधानमंत्री इमरान खान और उनकी पार्टी पर निशाना साधा। उन्होंने कहा कि तानाशाहों के बेटे और बेटियां पीटीआई में हैं। उन्होंने कहा कि तीन जजों के फैसले को स्वीकार नहीं किया जाएगा। इन तीन जजों में से एक ने अपने फैसले के जरिए पिछले साल मुख्यमंत्री के चुनाव में कुछ वोटों को खारिज कर पंजाब सरकार को पीटीआई के हवाले कर दिया था।